मूल्य: ₹30

मई–जून 2019

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

www.icar.org.in

देश में बढ़ती विदेशी सब्जियों की खेती

भारत में खाने-पीने के शौकीनों की बदौलत जहां फूड सर्विस का बाजार तेजी से बढ़ रहा है, वहीं इसकी वजह से विदेशी सब्जियों की खेती में भी बढ़ोतरी हो रही है। त्रिनिडाड की मिर्च बिशप्स क्राउन, पेरू की मिर्च अजी अमैरिलो, जापानी साग मिजुना-मित्सुबा, वाइल्ड रॉकेट सलाद पत्ता और थाई ग्रीन्स की खेती भारत में भी शुरू हो चुकी है।

हाल में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार विदेशी साग-सब्जियों का बाजार सालाना 15 से 20 फीसदी की दर से देश में बढ़ रहा है। नेशनल रेस्तरां एसोसिएशन ऑफ इंडिया और टेक्नोपैक के एक अध्ययन के अनुसार, वर्ष 2020 में भारत में फूड सर्विस का बाजार 78 अरब डॉलर तक पहुंच सकता है, यानी यह करीब उतना ही हो जाएगा, जितना फिलहाल भारतीय आई.टी. उद्योग निर्यात करता है। विदेशी सब्जियों की होटलों और रेस्तरां में बढ़ रही मांग के कारण भारत के किसानों ने भी विदेशी सब्जियों की खेती शुरू कर दी है।

भारत में पहले विदेशी सब्जियों की खेती नहीं की जाती थी। देश के बड़े-बड़े रेस्तरां सलाद पत्तों से लेकर यूरोपीय सब्जियों तक ऐसे हर उत्पाद का विदेश से ही आयात करते थे। विदेशी सब्जियों की देश में खेती का चलन पिछले पांच सालों में काफी तेजी से बढ़ा है। ऐसी हरी सब्जियों की खेती वाले फार्म की संख्या भी खासकर मानेसर (दिल्ली के पास हरियाणा में), पुणे, बेंगलुरू और मैसूर में तेजी से बढ़ी है। इन फार्म के ग्राहकों में ज्यादातर फाइव स्टार होटलों में चलने वाले रेस्तरां होते हैं। इनके कुछ उत्पाद छोटे-छोटे रिटेल स्टोर में भी बिक्री के लिए जाते हैं।

होटलों और रेस्तरां में विदेशी सब्जियों की बढ़ती मांग

किसानों के लिए लाभदायक विदेशी सब्जियाँ

देश में विदेशी सब्जियों की खेती से रेस्तरां की लागत में भारी बचत हो रही है। भारत में उगाया गया विदेशी किस्म का सलाद पत्ता आयात के मुकाबले 30 फीसदी सस्ता पड़ रहा है। आयातित चेरी टमाटर की लागत 1000 रुपए प्रति कि.ग्रा. है जबकि देश में पैदा किए जाने पर इनकी लागत महज 200 रुपये प्रति कि.ग्रा. है। देश की 42 प्रतिशत जनसंख्या शाकाहारी है। भारत समेत पूरी दुनिया में सब्जियां मुख्य आहार का अभिन्न अंग हैं। देश में अभी केवल 2.8 प्रतिशत भूमि से विश्व की 15 प्रतिशत सब्जियां उत्पादित हो रही हैं।

पौष्टिक हैं विदेशी सब्जियां

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अंतर्गत कार्यरत भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी की रिपोर्ट के अनुसार, वर्ष 2020 तक 225 मिलियन टन सब्जियों की जरूरत पड़ेगी। भारत में अभी सालाना 162.2 मिलियन टन सब्जियों का उत्पादन हो रहा है। ऐसे में भारत को सब्जी उत्पादन बढ़ाना होगा, जिसके लिए संस्थान के वैज्ञानिक, सब्जियों की उन्नत किस्मों को विकसित करने में लगे हैं। रिपोर्ट के मुताबिक देश में सब्जियों की उत्पादकता 17.4 टन प्रति हैक्टर है, जो विश्व की औसत उत्पादकता 18.8 टन प्रति हैक्टर से कम है। इसे बढ़ाने के लिए भी काम किया जा रहा है। विदेशी सब्जियों की खेती करके इस अंतर को भी कम किया जा सकता है।

वाइल्ड रॉकेट सलाद पत्ता और पेरु की मिर्च

प्रस्तुतिः अश्वनी कुमार निगम

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की
लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष : 40, अंक : 3
मई-जून 2019

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — अध्यक्ष
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — सदस्य
   परियोजना निदेशक
   कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — सदस्य
   पूर्व डीन
   भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — सदस्य
   निदेशक
   राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग
   नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — सदस्य
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
   पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — सदस्य
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — सदस्य
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — सदस्य सचिव
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक : **अशोक सिंह**

संपादन सहयोग : **सुनीता अरोड़ा**

प्रधान प्रोडक्शन अधिकारी : डा. **वीरेन्द्र कुमार भारती**
स. मुख्य तकनीकी अधिकारी: **अशोक शास्त्री**

लेआउट डिजाइन
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
अशोक शास्त्री

व्यवसाय सम्पर्क सूत्र
सुनील कुमार जोशी
व्यवसाय प्रबंधक
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00
E-mail : phalphul@gmail.com

विषय सूची

संपादकीय — सब्जी उत्पादक किसानों का जागरूक होना है जरूरी–अशोक सिंह

3 **आवरण कथा**

सजावटी पौधों से महकती गृहवाटिका
मीनू कुमारी, संजय कुमार सिंह, राम कुमार मलिक और तेजपाल सिंह तोमर

11 **प्रबंधन**

फायदेमंद है कागजी नीबू की खेती
अनोप कुमारी

18 **उपयोग**

बेल फल का प्रसंस्करण व भंडारण
योगेश कुमार, किपु किरण सिंह महिलांग, सौमित्र तिवारी और यशवंत कुमार

22 **पौधशाला**

कैसे तैयार करें सब्जियों के पौधे
कमलेश अहिरवार, वीणा पाणि श्रीवास्तव, उत्तम कुमार त्रिपाठी और राजीव कुमार सिंह

27 **रोकथाम**

अनार में जड़गांठ सूत्रकृमि की चुनौती
अरविन्द सिंह तेतरवाल, रामनिवास, संजय कुमार और देवीदयाल

34 **सफलता गाथा**

शतावर की खेती से भरपूर आय
परमेश्वर लाल सारण, हेतल क्रिस्चियन, रिद्धि पटेल और गंगा देवी

41 **जानकारी**

मई-जून में बागों में की जाने वाली आवश्यक कृषि क्रियाएं
राम रोशन शर्मा और हरे कृष्णा

6 **पुष्प उत्पादन**

कैसे पाएं ग्लेडियोलस के ज्यादा फूल
अरुण कुमार, मनोज कुमार शर्मा, अश्विनी कुमार और आर.एस. सेंगर

15 **उद्यमिता**

फल और सब्जियों का प्रसंस्करण एवं प्रौद्योगिकी
प्रगतिका मिश्र और रवि शंकर

20 **रोग प्रबंधन**

आम के कायिकी विकार
पंकज कुमार, के. ऊषा और अनुपम तिवारी

25 **विधि**

गाजर की उन्नत खेती
दलपत सिंह और पी.आर. मेघवाल

30 **नियंत्रण**

आम के बागों का एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन
मेघा विभुते, अजीत सिंह और कार्तिकेय सिंह

36 **बीज उत्पादन**

आलू के गुणवत्ता बीजों पूर्ण का महत्व
सुगनी देवी, मो. अब्बास शाह, रत्ना प्रीति कौर और आर.के. सिंह

आवरण II सामयिक

देश में बढ़ती विदेशी सब्जियों की खेती

आवरण III नया ट्रेण्ड

फल और सब्जियों के बीज उत्पादन से समृद्धता

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं, उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें।

सब्जी उत्पादक किसानों का जागरूक होना है जरूरी

हमारे देश में सब्जियों का सर्वाधिक उत्पादन पश्चिम बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश जैसे प्रदेशों में मुख्य रूप से किया जाता है, जहां पर आर्थिक बदहाली काफी व्यापक है। यहां के सीमांत और छोटी जोत वाले कृषकों द्वारा सब्जियों जैसी नगदी फसल की खेती करने के बावजूद, इनकी आमदनी में ज्यादा बदलाव होने के संकेत नहीं दिखाई पड़ते हैं। इस स्थिति का विश्लेषण करने पर प्रमुख तौर पर तीन कारकों को इस संदर्भ में महत्वपूर्ण माना जा सकता है। इन पर समुचित रूप से ध्यान दिया जाए, तो न सिर्फ सब्जी उपज की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है बल्कि इन नगदी फसलों से बिचौलियों की भूमिका को हटाते हुए कहीं अधिक आय भी किसानों द्वारा हासिल की जा सकती है। पहला कारण है, सब्जियों की खेती के लिए आवश्यक गुणवत्तापूर्ण आदानों की समय पर उपलब्धता को सुनिश्चित किया जाना। इसके अंतर्गत क्षेत्र एवं जलवायु के अनुरूप प्रामाणिक, उन्नत एवं संकर बीजों, कीटनाशक दवाओं (अथवा जैविक आदानों), सूक्ष्म सिंचाई सुविधाओं तथा आवश्यक कृषि उपकरणों आदि का खासतौर पर उल्लेख किया जा सकता है। परंपरागत एवं स्थानीय स्रोतों से इन आदानों को हासिल करने में आमतौर पर कृषकों को काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कई बार वांछित मात्रा में बीज नहीं मिल पाते तो कई बार बेहद खराब क्वालिटी के बीज मिलते हैं। निस्संदेह इन सबकी वजह से उपज एवं उत्पादकता पर प्रतिकूल असर पड़ता है। ऐसे में समझदारी तो यही है कि समय रहते सरकारी संस्थाओं/विक्रय केंद्रों से प्रमाणित बीज एवं अन्य आवश्यक आदानों को खरीद लेना चाहिए ताकि इस तरह की समस्या का सामना न करना पड़े।

इसी क्रम में दूसरे महत्वपूर्ण कारण पर भी नजर डालते हैं। किसानों एवं उपभोक्ताओं के बीच में बिचौलियों के कई स्तर होते हैं, जो थोक व्यापारी से लेकर आढ़तियों के रूप में हैं। शाक-सब्जी जैसी शीघ्र खराब होने वाली नगदी फसलों को जल्दबाजी में बेचने के कारण किसानों को अक्सर ज्यादा मूल्य नहीं मिल पाता है। यह भी सच है कि अंतिम उपभोक्ताओं तक पहुंचते-पहुंचते इन उत्पादों का मूल्य कम से कम दस गुना अधिक हो जाता है। यह समझना मुश्किल नहीं कि इसका अधिकांश हिस्सा किसके पास जाता है। सरकारी ऑनलाइन पोर्टल ई-नाम के अलावा कई स्टार्टअप भी इस क्षेत्र में आ गए हैं, जो सीधे किसानों से उपज खरीदते हैं। ये परंपरागत थोक व्यापारियों तथा खुदरा दुकानदारों की तुलना में बेहतर मूल्य देते हैं। सब्जी उत्पादक किसानों को भरसक प्रयास करना चाहिए कि इन्हें ही अपनी फसल बेचें।

अंत में तीसरे एवं अहम् कारण पर भी जरा गौर करें। खेती के बदलते परिदृश्य में किसानों को आधुनिक एवं वैज्ञानिक तौर-तरीकों की ओर भी समय रहते ध्यान देना होगा अन्यथा वे निरंतर पिछड़ते चले जाएंगे। उदाहरण के लिए ग्रीनहाउस में सब्जियों/बेमौसमी सब्जियों को उगाना, फसल पर निगरानी रखने हेतु उपलब्ध सेंसर्स का उपयोग, कटाई/तुड़ाई में मानव श्रम की बजाय मशीनों/उपकरणों का प्रयोग, फलों-सब्जियों के प्रसंस्करित उत्पाद बनाकर बेचने पर जोर आदि का इस क्रम में नाम लिया जा सकता है।

कृषक समुदाय तक इस प्रकार की जानकारियां पहुंचाने की दिशा में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के सभी संस्थान, कृषि विज्ञान केंद्र, कृषि विश्वविद्यालय आदि कार्यरत हैं। समय-समय पर प्रशिक्षण शिविरों एवं कार्यशालाओं का भी इन संस्थाओं द्वारा आयोजन किया जाता है। अब समय आ गया है कि किसान भाई इनसे संपर्क कर जागरूक होने के साथ अपनी मेहनत से उपजाई गई फसल से अधिकाधिक आय प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हों।

(अशोक सिंह)

सजावटी पौधों से महकती गृहवाटिका

मीनू कुमारी[1], संजय कुमार सिंह[2], राम कुमार मलिक[3] और **तेजपाल सिंह तोमर[3]**

सजावटी पौधे प्रकृति की अनुपम देन हैं। पेड़-पौधे जहां एक ओर हमें भोजन, वस्त्र, घर, पानी, शुद्ध हवा, ईंधन, मृदा, दवा तथा अनेक जीवनोपयोगी वस्तुएं प्रदान करते हैं, वहीं अपनी प्रकृति प्रदत्त सुंदरता से हमारे जीवन में उमंग का अहसास भी भर देते हैं। अंधाधुंध शहरीकरण के कारण ईंट व कंक्रीट की बड़ी-बड़ी इमारतों में रहने वाले लोगों का अपने आसपास की जमीन से सम्पर्क टूट जाता है। बागवानी का शौक होने के कारण कुछ लोग पेड़-पौधों को गमलों में लगाकर घर या बरामदे में रखते हैं। इसी कारणवश पौधों की मांग निरंतर बढ़ रही है तथा इसने एक स्वरोजगार का रूप ले लिया है।

साधारणतया अलंकृत या सजावटी पौधों को बीज और कलम द्वारा या दोनों विधियों द्वारा प्रवर्धित करते हैं, परंतु बीजू पौधों की गुणवत्ता कलमी पौधों की तुलना में बहुत अच्छी नहीं होती है। सजावटी पौधे के तनों पर उन्नत किस्मों की कलम, कली (बड) को चश्मा चढ़ाकर या गूटी बांधकर तैयार किया जाता है। गूटी से तैयार पौधे अधिक हरे-भरे और फूलों से लदे रहते हैं। अत: उन्हें जड़ित पौधे के रूप में ही खरीदा जाना चाहिए। सजावटी पौधों की खरीददारी

[1]सरकारी नर्सरी महरौली, केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग, शहीद जीत सिंह मार्ग, नई दिल्ली-11006; [2]फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-110012; [3]केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग, चतुर्थ तल, इन्द्रप्रस्थ भवन, आईटीओ, नई दिल्ली-110002

सजावटी पौधा

में विशेष समझदारी की भी आवश्यकता होती है।

कब खरीदें सजावटी पौधे

सजावटी पौधों के उचित विकास के लिए महत्वपूर्ण है, उन्नत किस्म के पूर्ण स्वस्थ पौधे खरीदना। उचित मौसम में सही समय पर पौधे खरीदकर अपनी क्यारियों तथा गमलों में लगाना भी काफी महत्वपूर्ण होता है। नये पौधे खरीदने का सर्वश्रेष्ठ समय वर्षा ऋतु का होता है। इस समय मौसम में हर समय नमी रहती है तथा समय-समय पर पानी बरसने से और बिना अधिक

क्यारियों में सजावटी पौधे

गमलों में ही रहने दें। उन्हें बाहर निकालने पर वातावरण के प्रतिकूल होने के कारण वे मर भी सकते हैं। सर्दियों में फूल देने वाले पौधों को सितंबर-अक्टूबर तक और गर्मी में फल देना वाले पौधों को फरवरी-मार्च में अवश्य लगा देना चाहिए। अन्य सभी पौधे वर्षा के दौरान ही लगाने के लिए उपयुक्त होते हैं तथा अच्छे ढंग से स्थापित होते हैं।

कहां से खरीदें सजावटी पौधे

सजावटी पौधे सदैव राजकीय पौधशालाओं, पंजीकृत या गैर-सरकारी पौधशालाओं या अपने पास के कृषि विश्वविद्यालय के उद्यान विभागों से ही खरीदें। यदि इनसे पौधे नहीं मिल पाते हैं तब आप किसी विश्वसनीय पौधशाला में जायें। कभी भी गलियों में और ठेलों पर लेकर बेचने वालों से कोई पौधा न खरीदें। यदि राजकीय तथा कृषि विश्वविद्यालय की पौधशालायें थोड़ी दूर भी हों, तो उन्हें ही प्राथमिकता दें। पंजीकृत पौधशालाओं से पौधे उचित दाम पर मिलते हैं, जिनकी प्रमाणिकता पर भरोसा किया जा सकता है।

फूलों की अद्भुत छटा

पौधों का चयन

सजावटी पौधे जैसे फूलदार एवं पत्तियों वाले पौधों का चुनाव अपने घर या बगीचे को ध्यान में रखकर करें। पुष्प देने वाले पौधों को फूल आने के करीब एक से डेढ़ महीने पहले स्थानांतरित करें। मौसम के अनुसार विभिन्न प्रकार की पत्तियों वाले सजावटी पौधे उपलब्ध होते हैं, उनका चुनाव घर की क्यारी एवं लॉन में रखने की जगह को ध्यान में रखकर करें। कई शौकीन लोग गमलों को देखरेख के पौधे स्वंय को नये वातावरण में तेजी से तथा सुविधापूर्वक स्थापित कर लेते हैं। इसके साथ ही उनमें नई वृद्धि शुरू हो जाती है। यह कार्य कड़ाके की सर्दी या लू भरी गर्मी में कभी न करें। अक्टूबर-नवंबर तथा फरवरी-मार्च में पौधे लगाने के कुछ ही दिनों बाद अधिक जाड़ा या तेज गर्मी की शुरुआत हो जाती है। अत: पौधों की बढ़वार रुकने लगती है तथा उन्हें अधिक रखरखाव की जरूरत पड़ती है। मई-जून में फूलदार या पत्तीदार खरीदे गए अधिकांश पौधे मर जाते हैं, परंतु इन दिनों कैक्टस के पौधे खरीदकर लगा सकते हैं। तेज गर्मी में पौधशालाओं से गमलों में लगे उच्चकोटि के स्वस्थ, पूरी तरह विकसित पौधे ही गमले सहित खरीदें और उन्हें

सजावटी पौधों की खरीददारी में सावधानियां

- सदैव स्वस्थ पौधे ही खरीदें। ऐसे पौधे जिनकी पत्तियां पीली पड़ रही हों या तनों या पत्तियों पर कीटों और रोगों का प्रकोप दिखाई दे, उन्हें कभी भी न खरीदें।
- अधिक लंबे तनों और अत्यधिक पत्तियों से युक्त बड़े पौधे प्राय: नये स्थानों पर कठिनाई से लगते हैं या सूख जाते हैं। अत: इस प्रकार के पौधों को वर्षा ऋतु में ही लगाना चाहिए।
- पौधशाला से पौधे अपने सामने जमीन से पर्याप्त मृदा तथा जड़ों के साथ निकलवा कर ही लें। पहले से निकाले गए पौधों में पर्याप्त जड़ नहीं होने से वे अक्सर सूख जाते हैं।
- यदि आप गुलाब के पौधे खरीद रहे हैं, तो उन्हें सावधानी से देख लें कि कलम या गूटी द्वारा तैयार पौधों में जड़ अच्छी तरह से आई हो और उनमें बढ़वार अच्छी हो।
- डहेलिया के कोमल तने की कलम द्वारा तैयार पर्याप्त जड़युक्त पौधे ही खरीदें। इनसे तैयार पौधों पर फूल बड़े-बड़े खिलते हैं।
- सदैव उन्नत किस्मों के ही पौधे खरीदें। हमेशा फूल या पत्तों के आकार और रंग को ध्यान में रखकर ही खरीदें।
- ऐसे पौधे खरीदें, जिनका आकार सही तथा हर तरफ फैला हो। टेढ़ी-मेढ़ी शाखाओं वाले पौधों को कभी न खरीदें।
- ऐसे पौधे जिनकी पत्तियां या शाखायें टूटी अथवा क्षतिग्रस्त हों, न खरीदें।
- फूल वाले पौधों को खरीदते समय ध्यान दें कि वे पूर्णरूप से विकसित और स्वस्थ हों, और जिनमें कम कली व फूल खिले हों।
- रोगग्रस्त या ऐसे पौधे जिनकी पत्तियां सिकुड़ी और विषाणु/रोगग्रसित हों, कभी भी न खरीदें।

सजावटी पौधों की बढ़ती मांग

रखने के लिए फ्रेम बनाकर उन पर गमलों को रखते हैं। कुछ मुख्य एवं प्रचलित सजावटी पौधे निम्न हैं:

- **फूलदार पौधे:** गेंदा, गुलदाउदी, डहेलिया, गुलाब, जरबेरा, कार्नेशन, गजानिया, सनफ्लावर, पॉपी, पिटुनिया, पैंजी, कैन्ना, सदाबहार, गुलबहार, मोतिया, नर्गिस इत्यादि।
- **पत्तीदार पौधे:** फर्न, एकलफा, मनीप्लांट, स्पाइडर प्लांट, इंग्लिश आईवी, संसेविएरिया, पेडीलेन्थस, क्रोटोन, ड्रैसिना कोलियस, ट्रैडसकान्सिया, मरान्टा, जैड प्लांट, फिलोंडेन्ड्रौन, डाइफेनबेकिया, मोरपंखी, अरेलिया इत्यादि।
- **फूल एवं पत्तीदार पौधे:** बोगेनविलिया, हिमेलिया, ऐडिनियमयुफोर्बिया, जेट्रोफा, इक्जोरा, रुक्मणी चांदनी इत्यादि।
- **कैक्टस एवं सकुलेंटस:** पेराडिया, मेलोकेक्टस, ऑपोनसिया, मेमीलेरिया, ग्रेप्टोपिटलम, हार्वोथिया, सिडम, सेमपरभिवम, जामियाकुलाकस, सिनेसिया, टावरिसिया इत्यादि।
- **कमरे में रखने योग्य पौधे:** डाइफेनबेकिया, ऐग्लोनिमा, अराउकेरिया, फिलोंडेन्ड्रोन, ड्रेसिना, क्रोडीलाइन, क्लोरोफाइटम, कौमॉसेम, सिनडपसीस (मनीप्लांट), एस्पेरेगस इत्यादि।

गृहवाटिका

सजावटी पौधों को कैसे लगाएं

सजावटी पौधों को खरीदकर घर लाने पर उन्हें किसी बाल्टी में थोड़ा पानी रखकर करीब 15 मिनट तक छाया में ही रखें या 2.0 ग्राम कार्बेन्डाजिम के एक लीटर पानी के घोल में रखना अच्छा रहता है। नये पौधे गमलों या क्यारी में सदैव संध्या के समय ही लगायें। यदि आप उन्हें गमलों में लगाना चाहते हैं तो गमलों को अच्छी प्रकार साफ कर छेद खोल दें। छेद पर टूटे गमले का टुकड़ा रखकर तैयार मिश्रण (मृदा एक भाग, बालू एक भाग तथा पत्ती की सड़ी खाद दो भाग) को ऊपर से एक इंच छोड़कर भरें तथा मिश्रण को हाथ से दबा दें। इस भरे गमले के ठीक मध्य में खरीदे गए पौधे की पैकिंग खोलकर इस प्रकार ऐसे बैठायें कि उसका थाला गमले की मृदा में ढक जाये तथा पौधा गमले में सीधा रहे। पौधा लगाने के बाद पौधे बराबर से दबा लें तथा सिंचाई करके गमले को 2-3 दिनों तक छायादार जगह पर रखें। रोजाना हल्की सिंचाई कर दें। यदि फफूंद का प्रकोप आने की समस्या हो तो 2 ग्राम रिडोमिल या कार्बेन्डाजिम के घोल से सिंचाई कर दें। पीट एवं वर्मीकम्पोस्ट का भी उपयोग किया जा सकता है तथा कैक्टस के लिए रेत की मात्रा अधिक होनी चाहिए।

गृहवाटिका में सजावटी पत्तीदार पौधे

क्यारी में लगाने वाले पौधों के वास्तविक आकार को ध्यान में रखकर गहरे गड्ढे खोदें। उसमें ऊपर की आधी मृदा और उतनी ही मात्रा में सड़ी पत्ती की कम्पोस्ट खाद डालें। जहां क्षारीयपन पाया जाता है, वहां 150 ग्राम जिप्सम धूल मिलाकर भर दें। इन गड्ढों के मध्य में, खरीदे गए पौधे की पैकिंग खोलकर सीधा लगायें। पौधों का जितना भाग पौधशाला में जमीन के ऊपर हो, उतना ही भाग जमीन के भीतर हो तथा लगाने के बाद मृदा को हाथ से दबा दें और हल्की सिंचाई करें। यदि दूसरे दिन तेज धूप होती है, तो कृत्रिम छाया प्रदान करें और सुबह ही सिंचाई कर दें तथा संध्या में कृत्रिम छाया हटा दिया करें। यह क्रिया दो-तीन दिनों तक दोहराते रहें, जब तक कि पौधे नये वातावरण में पूर्णतया स्थापित नहीं हो जाते हैं। हमेशा कुछ अधिक पौधे लिया करें ताकि कुछ पौधे यदि लगाने पर नहीं चलते तो उनके स्थान पर वे लगाये जा सकते हैं।

सजावटी पौधों की खरीददारी एक वैज्ञानिक काम है, जिसमें विशेष सावधानी और समझदारी दिखानी चाहिए। यदि उपरोक्त बातों को ध्यान में रखेंगे तो खरीददारी सही होगी और एक अच्छी गृहवाटिका लगा सकेंगे एवं आसपास की जगह को प्रकृति के करीब लाकर सुख की अनुभूति प्राप्त कर सकेंगे।

कैसे पाएं ग्लेडियोलस के ज्यादा फूल

अरुण कुमार, मनोज कुमार शर्मा, अश्विनी कुमार और **आर.एस. सेंगर**
कृषि जैव प्रौद्योगिकी विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ-250110 (उत्तर प्रदेश)

ग्लेडियोलस इरिडेसी कुल का एक अत्यन्त सुंदर पुष्प है। यह विश्व के लोकप्रिय फूलों में से एक है। ग्लेडियोलस शब्द लैटिन भाषा के 'ग्लेडियस' शब्द से लिया गया है, जिसका आशय 'तलवार' से है। इस पौधे की पत्तियां तलवार के आकार की होती हैं। यह एक बहुवर्षीय पौधा है, जोकि व्यावसायिक दृष्टिकोण से कटे फूल के उत्पादन के लिए उगाया जाता है। यह सुंदर पुष्प स्पाइक (डंडी) के लिए मशहूर है। ये विभिन्न आकर्षक रंगों के एवं उत्कृष्ट गुणवत्तायुक्त होते हैं। ग्लेडियोलस के एक पौधे की डंडी पर लगभग 30 फूल तक आ सकते हैं। इस पुष्प का जन्म स्थान ट्रॉपिकल एवं दक्षिणी अफ्रीका माना जाता है। विश्व में संयुक्त राज्य अमेरिका (फ्लोरिडा एवं कैलिफोर्निया) हॉलैंड, इटली, फ्रांस, पोलैंड, बुल्गारिया, ब्राजील, भारत और इजराइल इस पुष्प के मुख्य उत्पादक देश हैं।

भारत में कुल पुष्प उत्पादन की दृष्टि से ग्लेडियोलस का तृतीय स्थान है। देश में इसकी खेती मुख्यत: उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, ओडिशा, छत्तीसगढ़, हरियाणा, महाराष्ट्र, उत्तराखंड, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश तथा सिक्किम में की जाती है। यह एक शीतकालीन पुष्प है, लेकिन इसकी खेती मध्यम जलवायु में वर्षभर की जा सकती है। इसके पुष्प लगभग 10-12 दिनों तक खिले रहते हैं। इस कारण इसे गमलों एवं गुलदस्तों में अधिक दिनों तक उपयोग में लाया जा सकता है। यह पुष्प औषधि के रूप में विभिन्न रोगों जैसे पेट की गड़बड़ी एवं दस्त उपचार के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है।

भूमि एवं जलवायु

ग्लेडियोलस उत्पादन के लिए सभी प्रकार की सामान्य मृदायें, जिनमें जल निकासी की उपयुक्त व्यवस्था हो, उत्तम मानी जाती हैं। बलुई दोमट मृदा, जिसमें जीवांश की अधिक मात्रा हो तथा मृदा पी-एच मान 6 से 7 के बीच हो, इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। यदि संभव हो तो इसकी खेती के लिए ऐसी भूमि का चयन करें, जो औद्योगिक प्रदूषणयुक्त क्षेत्र से दूर हो। उपोष्ण कटिबंधीय एवं उष्ण कटिबंधीय जलवायु दशाएं इसकी खेती हेतु सर्वोत्तम मानी गई हैं। इसकी उपज के लिए 20^0 से 30^0 सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। इसकी खेती मैदानी भागों तथा 2500 मीटर की ऊंचाई पर भी की जा सकती है। ज्यादा गर्म या अधिक ठंडी जलवायु दोनों ही दशायें इसके लिए हानिकारक हैं। उचित वृद्धि एवं पुष्प बनाने के लिए इसे अधिक

प्रकाश की आवश्यकता होती है। पुष्प आने के समय वर्षा फसल पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

किस्में

ग्लेडियोलस उत्पादन के लिए उपयुक्त प्रजाति का चयन महत्वपूर्ण होता है। प्रजातियों का चयन इसे उगाने के उद्देश्य पर निर्भर करता है। इसके विभिन्न आकार के स्पाइक (डंडी) एवं रंगों वाली प्रजातियां भारत में उपलब्ध हैं।

खेत की तैयारी

बुआई के लिए प्रथम जुताई मृदा पलट हल से तथा 2-3 जुताइयां कल्टीवेटर या देसी हल से करने के बाद पाटा लगाकर भूमि को समतल कर लेना चाहिए। इसकी जड़ें ज्यादा गहराई तक नहीं जाती हैं। इसलिए खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए, जिससे पौधों की जड़ों तक वायु संचार भलीभांति हो सके। आखिरी जुताई के समय 200-300 क्विंटल गोबर की सड़ी खाद खेत में अच्छी तरह मिला देनी चाहिए।

बुआई एवं जुताई

ग्लेडियोलस की बुआई भारत के समतल क्षेत्रों में सितंबर से शुरू होकर नवंबर तक चलती है। अच्छे गुणवत्तायुक्त घनकंदों एवं पुष्पों के उत्पादन के लिए इसकी बुआई 15 अक्टूबर तक उत्तम मानी जाती है। भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी बुआई मार्च से मई तक की जाती है। ग्लेडियोलस की बुआई घनकंदों द्वारा की जाती है, जोकि सुषुप्तावस्था में नहीं होने चाहिए। घनकंदों की सुषुप्तावस्था दूर करने के लिए उनका कम तापमान (3^0-7^0 सेल्सियस) पर भंडारण करना एवं विभिन्न रसायनों जैसे-जिबरेलिक अम्ल (100 पीपीएम), इथेरल (100 पीपीएम) एवं वेंजिल एडेनिन (20 पीपीएम विलयन में 24 घंटे तक भिगोना) आदि प्रयोग में लाए जाते हैं। जिबरेलिक अम्ल एवं कम तापमान उपचार देने की अपेक्षा कटे हुए घनकंदों की सुषुप्तावस्था दूर करने के लिए थायोयूरिया (500 पीपीएम) में 24 घंटे तक भिगोकर रखने का उपचार उत्तम माना गया है। बुआई के लिए प्रति हैक्टर 28000-42000 कंदों की आवश्यकता होती है। ये सामान्यत: 15×15 सें.मी. या सघन बुआई के लिए 15×25 सें.मी. की दूरी पर तथा 5-6 सें.मी. गहराई में बोये जाते हैं। बीजजनित रोगों से बचाव के लिए कंदों को 0.2 प्रतिशत बाविस्टिन के घोल में लगभग आधा घंटा डुबोकर तथा फिर छाया में सुखाकर बुआई करनी चाहिए।

ग्लेडियोलस घनकन्द

फूलों की कटाई, उपज एवं भंडारण

बुआई के पश्चात अगेती किस्मों में लगभग 60-65 दिनों में, मध्यम किस्मों में 80-85 दिनों में तथा पछेती किस्मों में 100-110 दिनों में पुष्पों का उत्पादन शुरू हो जाता है। पुष्पों या स्पाइकों की कटाई सुबह के समय करनी चाहिए। कटाई के तुरन्त बाद डंडियों को पानी से भरी बाल्टी में रख देना चाहिए। पुष्पों की कटाई बाजार को ध्यान में रखकर की जानी चाहिए। यदि पुष्पों को तुरन्त ही प्रयोग में लाना है तो डंडी पर जब लगभग 3-4 पुष्प विकसित हों, तब ही कटाई करनी चाहिए। यदि पुष्पों को दूर भेजना है तो डंडी की सबसे निचली कली के खिलते ही कटाई कर लेनी चाहिए तथा लगभग 50-100 डंडियों को गुच्छों में बांधकर भलीभांति पैक करके बाजार में भेजना चाहिए। यदि तुरन्त ले जाना संभव न हो तो इसकी डंडियों को लगभग 2^0-3^0 सेल्सियस रेफ्रिजिरेशन दशा में लगभग 7 दिनों तक भंडारित किया जा सकता है। ग्लेडियोलस के एक हैक्टर खेत से पौधों की दूरी के आधार पर लगभग 1 लाख से 1.25 लाख पुष्प डंडियों का उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

ग्लेडियोलस घनकंदों की बुआई

सारणी 1. भारत में विकसित ग्लेडियोलस की विभिन्न प्रजातियां एवं उनकी विशेषताएं

क्र. सं.	प्रजाति का नाम	स्पाइक की लंबाई (सें.मी.)	विकसित करने वाले संस्थान	पुष्पों का रंग	उत्पादन (स्पाइक/मी.^{2}/ फसल मौसम)
1	अर्का अमर	55-60	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	सफेद ब्लॉच के साथ गुलाबी	30-31
2	अर्का गोल्ड	80-85	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	लाल ब्लॉच के साथ पीला	24-25
3	अर्का नवीन	85	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	हल्का पीला ब्लॉच के साथ बैंगनी	27-28
4	आरती	93	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	लाल पीला ब्लॉच व लाल धब्बे के साथ नारंगी	12-13
5	अप्सरा	117	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	पीले धब्बों के साथ बैंगनी	18-19
6	सपना	83	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	हरित पीले ब्लॉच व हल्के लाल किनारों के साथ हल्का पीला	17-18
7	शोभा	105	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	क्रीम रंग के साथ हल्का गुलाबी	18-19
8	अर्चना	80	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	सफेद धारियों के साथ गुलाबी-पीला	16-18
9	बसन्त बहार	50	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	धब्बेदार मैजेंटा के साथ गहरा पीला	14-15
10	मनहार	60	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	गहरी गुलाबी पंखुड़ियों के किनारों के साथ हल्का सफेद	14-18
11	ज्वाला	65	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	चमकीली लाल धारियों के साथ सिंदूरी	14-18
12	मनीषा	60	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	गहरी गुलाबी पंखुड़ियों के किनारों के साथ सफेद	14-16
13	मनमोहन	80	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	पंखुड़ियों के बैंगनी सिरों के साथ हल्का पीला	14-16
14	मोहिनी	60	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	गहरी गुलाबी पंखुड़ियों के किनारे के साथ सफेद	12-14
15	मुक्ता	70	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	बैंगनी धब्बों के साथ सब्ज-पीला	12-14
16	पीताम्बर	64	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	बैंगनी पट्टी के साथ हरित-पीला	15-16
17	त्रिलोकी	65	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	हल्के पीले के साथ गुलाबी	14-15
18	पूनम	98	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	हल्का पीला	17-18
19	मीरा	106	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	बर्फीला सफेद	18-19
20	फुले-प्रेरणा	117	एम.पी.के.वी., राहुरी (महाराष्ट्र)	सफेद पंखुड़ियों के साथ हल्का गुलाबी	16-17
21	श्रीगणेश	117	एम.पी.के.वी., राहुरी, (महाराष्ट्र)	गहरे पीले के साथ हल्का सफेद	19-20
22	गजल	35	एन.बी.आर.आई., लखनऊ (उत्तर प्रदेश)	धूमिल गुलाबी	14-18
23	पूसा उन्नति	141	आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली	लाल के साथ बैंगनी	18-20
24	पूसा मनमोहक	93	आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली	सफेद धारियों के साथ केसरिया लाल	19-21
25	पूसा सृजन	85	आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली	बैंगनी के साथ चमकीला गुलाबी	16-17
26	पूसा-रेड वैलेंटाइन	108	आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली	ईंट जैसा लाल	18-19
27	पूसा विदुषी	90	आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली	धूसर बैंगनी धब्बों के साथ बैंगनी सफेद	15-16
28	पूसा सिंदूरी	77.98	आई.ए.आर.आई., नई दिल्ली	पीले व लाल रंग के धब्बों के साथ सिन्दूरी लाल	17-18
29	कुमकुम	83	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	पीले धब्बों के साथ लाल	15
30	पंजाब ग्लैड-1	50	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	लाल-पीले धब्बों के साथ चमकीला लाल	11-12
31	अर्का आयुष	110	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	हरे सफेद किनारों के साथ बैंगनी	16-17
32	आई.आई.एच. आर.-जी.-12	119-120	आई.आई.एच.आर., बेंगलुरु (कर्नाटक)	.....	14-15

खाद एवं उर्वरक

ग्लेडियोलस की उचित वृद्धि एवं विकास के लिए उर्वरकों का प्रबंधन सही समय पर करना चाहिए, जिससे अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सके। अधिक बढ़वार वाली किस्मों को कम बढ़वार वाली किस्मों की अपेक्षा अधिक मात्रा में उर्वरकों की आवश्यकता पड़ती है। नाइट्रोजन की कमी होने से इसकी पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं तथा पुष्पकों की संख्या घट जाती है। फॉस्फोरस की कमी से निचली पत्तियों का रंग नीला तथा पोटाश की कमी से पुष्पकों की संख्या का घटना, डंडी का छोटा रह जाना तथा पुरानी पत्तियों का पीला पड़ना आदि लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। फसल में पोषक तत्वों की आवश्यकता होने पर नाइट्रोजन 20 ग्राम, फॉस्फोरस 30 ग्राम, पोटाश 30 ग्राम प्रति वर्गमीटर या नाइट्रोजन 200 कि.ग्रा., फॉस्फोरस 300 कि.ग्रा. तथा पोटाश 300 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से डालनी चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश

ग्लेडियोलस की विभिन्न प्रजातियां

ग्लेडियोलस की प्रमुख विशेषताएं

- सरल खेती
- पुष्प प्राप्ति में कम समय
- पुष्पों के विभिन्न रंग
- स्पाइक की अधिक दिनों तक ताजा रहने की क्षमता
- रोग एवं कीटों का कम प्रकोप
- खेती से अधिक मुनाफा

उपरोक्त कारणों की वजह से ही कृषकों में इस पुष्प की खेती के प्रति लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय भूमि में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष मात्रा बुआई के एक महीने बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में फसल में देनी चाहिए।

सिंचाई एवं खरपतवार प्रबंधन

सिंचाई की आवश्यकता भूमि एवं जलवायु पर निर्भर करती है। बुआई के समय खेत में उचित नमी रहनी चाहिए, जिससे कंदों का फुटाव आसानी से हो सके। फसल में पहली सिंचाई कंदों के अंकुरण के पश्चात (सामान्यत: 10-15 दिनों) तथा इसके बाद सर्दियों में 10-12 दिनों के अंतराल एवं गर्मियों में 6-7 दिनों के अंतराल पर पर्याप्त होती है। फसल की ज्यादा बढ़वार के समय पुष्प निकलने की शुरुआत होती है। चौथी पत्ती बनने के समय से जब पुष्प की डंडी की लंबाई बढ़ती है, तो यह अवस्था पानी की कमी के प्रति संवेदनशील होती है। खेत की चार-पांच बार निराई-गुड़ाई करनी चाहिए, जिससे खरपतवार नियंत्रण होता है और परिणामत: गुणवत्तायुक्त फसल एवं अधिक उत्पादन प्राप्त होता है। निराई-गुड़ाई के समय पौधों के चारों तरफ लगभग 10 सें.मी. तक मृदा चढ़ा देनी चाहिए, जिससे उन्हें सीधा खड़े रहने में मदद मिलती है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए ग्लाइफोसेट (राउंडअप 6 लीटर/हैक्टर) को बहुवर्षीय खरपतवारों के लिए खेत की तैयारी के समय मृदा में मिला देना चाहिए। ग्रामोक्सोन 6 लीटर/हैक्टर का छिड़काव बुआई के बाद (फुटाव के पहले) एकवर्षीय खरपतवारों को नियंत्रित करता है। उगने से पहले रसायन स्टाम्प 3 लीटर/हैक्टर की दर से छिड़काव लगभग 70 दिनों तक सभी तरह के खरपतवारों को नियंत्रित करने में कारगर माना गया है।

रोग एवं कीट नियंत्रण

बोट्राइटिस सॉफ्ट रॉट

यह रोग शीत संग्रहण के दौरान होता है। इसमें कंद कोमल एवं स्पंजी हो जाते हैं। प्रारंभिक अवस्था में इसका संक्रमण सिर्फ कंदों की सतह पर ही होता है, परंतु बाद में यह अंदर तक पहुंच जाता है। तापमान अधिक बढ़ने पर रोग संक्रमण कम हो जाता है, जिससे कंदों में सड़ांध कम होती है। खेत में पौधों की पत्ती पर गोल भूरे धब्बों का बनना इसके संक्रमण के लक्षण हैं। ये धब्बे केवल पत्ती की ऊपरी सतह पर ही दिखाई देते हैं। इसकी रोकथाम के लिए पौधों की पत्तियों पर 0.25 प्रतिशत डाइथेन एम.-45 का सप्ताह में दो बार छिड़काव तथा संग्रहण के दौरान स्वस्थ कंदों पर धूमण करना चाहिए।

फ्यूजेरियम कॉर्म रॉट

यह फंगस, संक्रमित कंदों एवं भूमि के द्वारा फैलता है। कंदों/घनकंदों में संक्रमण से पादप वृद्धि एवं भंडारण के समय सड़न शुरू हो जाती है। भूमि का खराब वायु संचार, बाढ़ या गर्म मौसम होने के कारण फसल का नुकसान और भी बढ़ जाता है। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा गाय के गोबर की खाद के रूप में देने पर क्षति और भी बढ़ जाती है। पौधे की वृद्धि का कम होना, कंदों में सड़न, हरी एवं छोटी कली और उनका कम खुलना इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए रोग सहिष्णु किस्मों का बोना, कंदों का 30 मिनट तक गर्म पानी में उपचार करके बोना, मृदा को धूम्रित

ग्लेडियोलस की प्रजाति 'पूसा सिन्दूरी'

करना एवं कंदों को फंजीसाइड (कवकरोधी रसायन) से उपचारित करना आदि तरीके अपनाये जाते हैं। इसके अलावा बुआई से पहले कंदों को आधा घंटे बेनलेट/बाविस्टिन के 0.2 प्रतिशत घोल में और मृदा को फ्यूराडॉन/थीमेट 10 जी. 3.0 ग्राम/वर्ग मीटर की दर से उपचारित करना भी रोग की रोकथाम के लिए उत्तम माना गया है।

पेनिसीलियम रॉट

यह रोग भंडारण के समय क्षतिग्रस्त (चोटिल या घाव लगे हुए) कंदों को संक्रमित करता है। इसमें कंदों की सतह पर गाढ़ी झुर्रियां पड़ जाती हैं, जिससे वे खुरदरे हो जाते हैं। उन पर लाल-भूरे धंसे हुए धब्बे, सड़न जैसे दिखते हैं। गर्म एवं नमीयुक्त मौसम इस रोग को बढ़ावा देता है। इस रोग की रोकथाम के लिए कंदों पर डाइथेन एम.-45 का धूमण करना चाहिए।

स्कैब

इस रोग का संक्रमण कंदों के छिलकों पर काले एवं खुरदरे घावों के रूप में दिखाई देता है। संक्रमण की शुरुआत पानी भरे हल्के पीले धब्बों से होती है और जैसे ही संक्रमण बढ़ता है ये काले धब्बे, धंसे हुए भूरे धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं। यह रोग संक्रमित कंदों से या दीमक के खाये हुए कंदों से फैलता है। इस रोग को कम करने के लिए संक्रमित कंदों या पौधों को निकालकर खत्म कर देना चाहिए। सिफारिश की गई कर्षण क्रियाओं एवं जीवाणुरोधी रसायनों का उपयोग भी किया जा सकता है।

थ्रिप्स

यह ग्लेडियोलस की फसल का एक मुख्य कीट है। पीले रंग के निम्फ एवं काले रंग के वयस्क कीट फसल की पत्तियों एवं डंडियों को नुकसान पहुंचाते हैं। इसके कारण पत्तियां विकृत एवं भूरे रंग की हो जाती हैं और यदि प्रकोप ज्यादा हो तो सूख जाती हैं। यह कीट फसल बढ़वार के समय आक्रमण करके पुष्पों का उत्पादन कम करता है तथा भंडारण के समय भी कंदों को क्षति पहुंचाता है। इसकी रोकथाम के लिए मिथाइल डेमेटान 25 ई.सी. या डाइमेथोएट 30 ई.सी. को 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर 10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करना चाहिए। भंडारित कंदों को 2^0 सेल्सियस तापमान पर 6 सप्ताह एवं बाद में 46^0 सेल्सियस तापमान पर गर्म पानी से उपचारित करके भी इस कीट के प्रकोप को लगभग खत्म किया जा सकता है।

फ्यूजेरियम कॉर्म रॉट से संक्रमित ग्लेडियोलस घनकन्द

ग्लेडियोलस स्पाइक (डंडी)

कटवर्म

यह कीट पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में पौधे को भूमि की सतह के पास से काटकर नुकसान पहुंचाता है। यह विकसित हो रही डंडियों एवं भूमि के अंदर के कंदों को भी क्षति पहुंचाता है। इनकी रोकथाम के लिए मिथाइल पैराथियान या क्वीनालफॉस का 0.05 प्रतिशत की दर से छिड़काव करना चाहिए।

लीफ इटिंग कैटरपिलर

यह कीट मुख्यत: पौधों की पत्तियां खाकर फसल को नुकसान पहुंचाता है। इस कीट की मादा पौधों की पत्तियों की निचली सतह पर समूह में अंडे देती है। वयस्क एवं परिपक्व लार्वा निचली सतह से खाना शुरू करके पूरी पत्ती को क्षति पहुंचाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए गर्मियों में भूमि की गहरी जुताई करनी चाहिए तथा फसल से संक्रमित पत्तियों एवं अंडों को एकत्र कर नष्ट कर देना चाहिए। क्वीनालफॉस 0.05 प्रतिशत या कार्बारिल 0.1 प्रतिशत या क्लोरोपायरीफॉस 0.05 प्रतिशत की दर से छिड़काव करके भी फसल को क्षति से बचाया जा सकता है।

माइट्स

इस कीट का आक्रमण पौधे की प्रारंभिक अवस्था में ही शुरू होता जाता है। यह पौधे की पत्तियों का रस चूसता है। इससे पत्तियां मुरझा जाती हैं तथा उनका रंग हल्का पड़ जाता है, परिणामस्वरूप बाद में गिर जाती हैं। इसकी रोकथाम के लिए मिथाइल पैराथियान 0.05 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।

निमेटोड

यह बहुत ही सूक्ष्म आकार का भूमि में रहने वाला कीट है। यह ग्लेडियोलस के पौधों की जड़ों को प्रभावित करता है। इसका प्रकोप होने पर पौधे की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं एवं उनकी बढ़वार रुक जाती है। इसलिए निमेटोडमुक्त कंदों की ही बुआई करनी चाहिए। कंदों को गर्म पानी से 57^0 सेल्सियस तापमान पर 30 मिनट तक उपचारित करने से निमेटोड की संख्या को कम किया जा सकता है। इसकी रोकथाम के लिए खेत में कार्बोफ्यूरॉन/फोरेट 1 ग्राम ए.आई./मी.^{2} का प्रयोग भी प्रभावी माना गया है।

कंदों को निकालना एवं भंडारण

पुष्प डंडियों के निकलने के लगभग 5-6 सप्ताह बाद कंद परिपक्व हो जाते हैं। जैसे ही कंद परिपक्व हो जाएं उन्हें निकाल लेना चाहिए अन्यथा उन पर फ्यूजेरियम रोग के संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है। पुष्प डंडियां निकालने के पश्चात कंदों की भलीभांति सफाई करके उन्हें हवादार जगह में 3^0-7^0 सेल्सियस तापमान तथा 75 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता पर भंडारित किया जा सकता है। ■

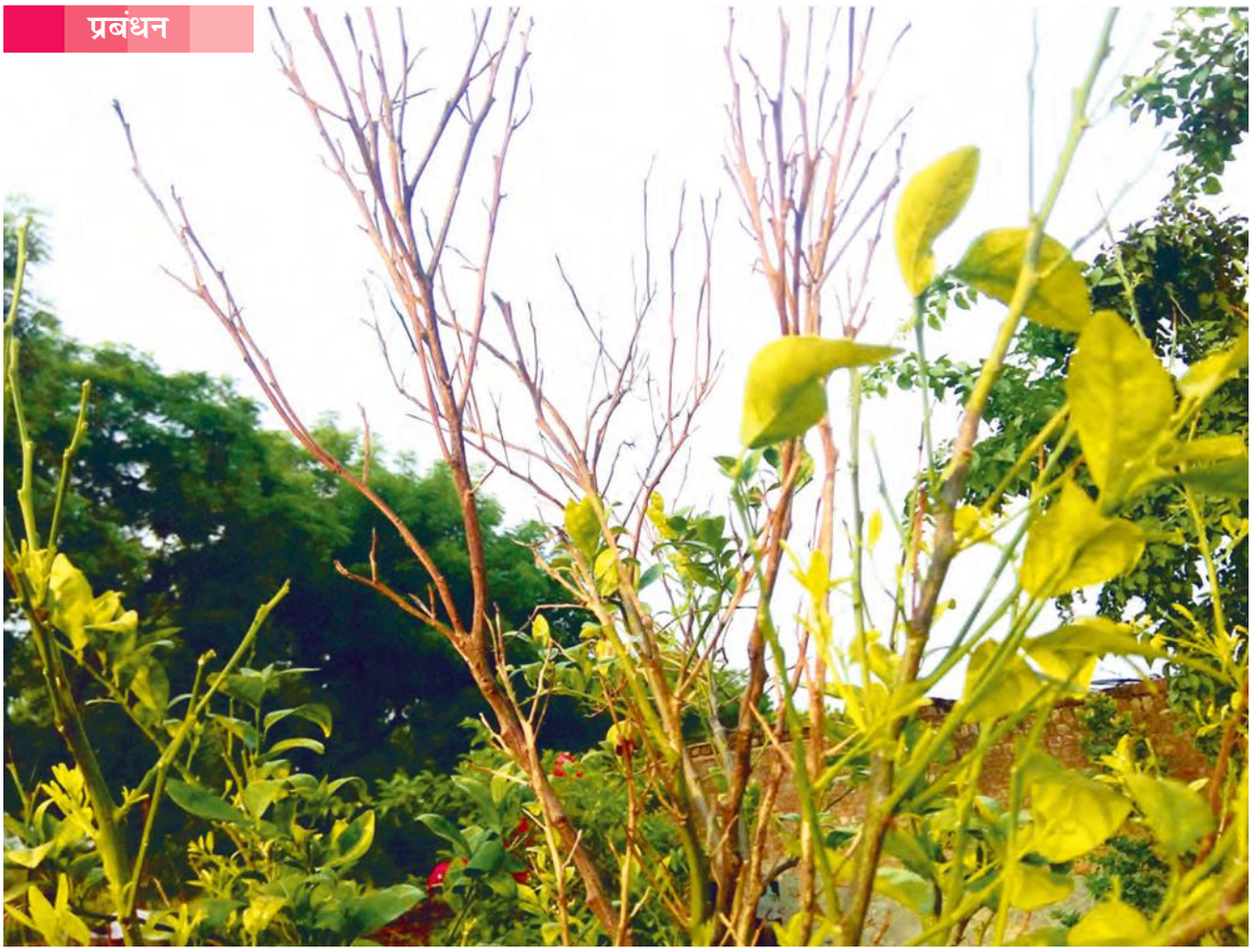

फायदेमंद है कागजी नीबू की खेती

अनोप कुमारी

कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर-नागौर (कृषि विश्वविद्यालय), जोधपुर-342304 (राजस्थान)

भारत को नीबूवर्गीय फलों का घर माना जाता है। यहां इस वर्ग की विभिन्न प्रजातियां पाई जाती हैं। इस वर्ग के फलों में मुख्य रूप से संतरा, मौसमी, नीबू, माल्टा एवं ग्रेपफ्रूट आते हैं। केले एवं आम के बाद नीबूवर्गीय फलों का भारत में क्षेत्रफल की दृष्टि से तीसरा स्थान है। नीबू, जिसको आम बोलचाल की भाषा में कागजी नीबू के नाम से जाना जाता है, को देश के लगभग सभी राज्यों में उगाया जाता है। यह फल अपने गुणों के कारण खासा लोकप्रिय है। यही कारण है कि गर्मियों में इसके भाव 100 रुपये प्रति कि.ग्रा. से भी अधिक पहुंच जाते हैं। इसमें औषधीय गुण मौजूद होने के कारण इसके फलों का उपयोग विभिन्न तरीकों से किया जाता है। इसके फलों में विटामिन 'सी' के अलावा विटामिन 'ए', विटामिन 'बी-1', लौह, फॉस्फोरस, कैल्शियम, प्रोटीन, रेशा, वसा, खनिज और शर्करा भी मौजूद होते हैं।

कागजी नीबू के फलों में 42 से 50 प्रतिशत तक रस निकलता है। इसका प्रयोग स्क्वैश, कोर्डियल और अम्ल इत्यादि बनाने के साथ-साथ प्रतिदिन के खाने में भी होता है। नीबू का रस पीने से शरीर में ताजगी एवं स्फूर्ति का भाव पैदा होता है। इसके फलों से स्वादिष्ट अचार भी बनाया जाता है। यही नहीं इसके छिलकों को सुखाकर विभिन्न तरह के सौंदर्य प्रसाधन भी बनाये जाते हैं। इन सभी विशेषताओं के कारण इसकी मांग लगभग वर्षभर बनी रहती है। परंतु तकनीकी जानकारी के अभाव एवं कीट व रोगों का सही समय पर निदान न कर पाने के कारण किसानों को आशातीत लाभ नहीं मिल पाता है।

भूमि व जलवायु

नीबू का पौधा काफी सहिष्णु प्रवृत्ति का होता है, जोकि विपरीत दशाओं में भी सहजता से पनप जाता है। अच्छा उत्पादन लेने के लिए उपोष्ण तथा उष्ण जलवायु सर्वोत्तम मानी गई है। ऐसे क्षेत्र जहां पाला कम पड़ता है, वहां इसको आसानी से उगा सकते हैं। इसकी खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। इसके पौधों की समुचित बढ़वार एवं पैदावार के लिए बलुई तथा बलुई दोमट मृदा उत्तम है, जिसमें जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपस्थित हों। इसके साथ ही जल निकास का भी समुचित प्रबंधन हो एवं उसका पी-एच मान 5.5 से 7.5 के मध्य हो। मृदा में 4-5 फुट

नीबू के बीज

की गहराई तक किसी प्रकार की सख्त तह नहीं हो, तो अच्छा रहता है।

उन्नत प्रजातियां

कागजी नीबू की कई प्रजातियां प्रचलित हैं जिनका चयन क्षेत्र विशेष अथवा गुणों के आधार पर कर सकते हैं। कुछ महत्वपूर्ण प्रजातियां हैं: पूसा अभिनव, पूसा उदित, विक्रम, कागजी कला, प्रमालिनी, चक्रधर, साई सर्बती, जय देवी, पी.के.एम-1, एन.आर.सी.सी. नीबू-7 और एन.आर.सी.सी. नीबू-8 इत्यादि। पौधे किसी विश्वसनीय स्रोत अथवा सरकारी नर्सरी से ही खरीदें। पौधे खरीदते समय यह भी ध्यान रखें कि वे स्वस्थ एवं रोगमुक्त हों।

पौध प्रसारण

नीबू का प्रवर्धन बीज, कलिकायन एवं एयर लेयरिंग (गूटी विधि) से किया जा सकता है। इसके बीजों में बहुभ्रूणता पाई जाती है, जिसके कारण इसका व्यावसायिक प्रसारण बीज द्वारा ही अधिक किया जाता है। इसके बीजों में किसी प्रकार की सुषुप्तावस्था नहीं पाई जाती है।

कागजी नीबू में गूटी विधि भी काफी प्रचलित है। इसके द्वारा कम समय में ही अच्छे पौधे तैयार किए जा सकते हैं। इस कार्य के लिए वर्षा वाला मौसम सर्वोत्तम होता है। गूटी तैयार करने के लिए पेन्सिल की मोटाई की शाखा (1.0-1.5 सें.मी.), जोकि लगभग एक वर्ष पुरानी हो, का चयन कर लें। चयनित शाखा से छल्ले के आकार की 2.5-3.0 सें.मी. लंबाई की छाल निकाल लें। छल्ले के ऊपरी सिरे पर सेराडेक्स पाउडर या इंडोल ब्यूटारिक एसिड (आई.बी.ए.) का लेप लगाकर छल्ले को नम मॉस घास से ढक दें। ऊपर से लगभग 400 गेज की पॉलीथीन को 15-20 सें.मी. चौड़ी पट्टी से 2-3 बार लपेटकर सुतली अथवा धागे से दोनों सिरों को कसकर बांध दें। 1.5-2.0 महीने बाद जब पॉलीथीन में से जड़ें दिखाई देने लग जाएं तब इस शाखा को पौधे से अलग करके नर्सरी थैलियों में लगा दें।

सिंचाई

यदि वर्षा नहीं हो रही हो तो रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई अवश्य करें। इसके पश्चात मृदा में पर्याप्त नमी बनाये रखें, खासकर पौधों के रोपण के शुरुआती 3-4 सप्ताह में और इसके बाद एक नियमित अंतराल पर सिंचाई करते रहें। पौधों की सिंचाई थाला बनाकर अथवा टपक सिंचाई पद्धति से कर सकते हैं। सिंचाई करते समय हमेशा यह ध्यान रखें कि पानी, पौधे के मुख्य तने के सम्पर्क में न आए। इसके लिए तने के आसपास हल्की ऊंची मृदा चढ़ा दें।

फल एवं फूलों का झड़ना

वैसे तो नीबू के पौधों पर फूल बहुतायत में आते हैं तथा फल भी अच्छी संख्या में ही बनते हैं। परंतु कई बार यह देखा गया है कि पुष्प या फल काफी संख्या में परिपक्व होने से पूर्व ही गिर जाते हैं। यह समस्या कई कारणों से आ सकती है, जिसमें पोषक तत्वों की कमी, कीट-रोगों का आक्रमण, वातावरणीय कारक, सिंचाई इत्यादि प्रमुख हो सकते हैं। फूल व फलों को झड़ने से बचाने के लिए कुछ प्रमुख उपाय निम्न हैं:

नीबू के फूल

- पुष्प बनते समय सिंचाई कदापि न करें।
- संतुलित मात्रा में पोषक तत्वों का प्रयोग करें।
- फलों के झड़ने की समस्या के समाधान के लिए आरियोफिन्जिन + 2, 4-डी + जिंक सल्फेट के तीन छिड़काव, जोकि फल बनने के बाद, मई व इसके एक महीने के बाद करें।

इसके लिए 12 ग्राम आरियोफिन्जिन + 6 ग्राम 2,4-डी + 3 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट और 1.5 कि.ग्रा. चूने को 550 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

खाद एवं उर्वरक

खाद एवं उर्वरकों की मात्रा देने का समय और तरीका पोषण प्रबंधन में बहुत महत्वपूर्ण है। खाद एवं उर्वरकों की मात्रा, मृदा की उर्वरा क्षमता एवं पौधे की आयु पर निर्भर करती है। सही-सही मात्रा का निर्धारण करने के लिए मृदा जांच आवश्यक है। यदि संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरक डाली जाए तो अच्छे उत्पादन के साथ-साथ मृदा के स्वास्थ्य का भी ध्यान रखा जा सकता है।

खाद तथा उर्वरकों को हमेशा पौधों के मुख्य तने से 20-30 सें.मी. की दूरी पर डालना चाहिए। गोबर की खाद की पूरी मात्रा को दिसंबर-जनवरी में, जबकि उर्वरकों को दो भागों में बांटकर दें। पहली मात्रा मार्च-अप्रैल में एवं शेष आधी मात्रा को जुलाई-अगस्त में दें। नीबू में सूक्ष्म पोषक तत्वों का भी

सारणी 1. खाद एवं उर्वरकों की मात्रा

पौधे की आयु (वर्ष)	गोबर की खाद (कि.ग्रा.)	यूरिया (ग्राम)	सिंगल सुपर फॉस्फेट (ग्राम)	म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्राम)
1 वर्ष	10	125	250	-
2 वर्ष	20	250	500	-
3 वर्ष	30	375	750	200
4 वर्ष	40	500	1000	200
5 वर्ष और अधिक	50	625	1250	400

थैलियों में तैयार पौध

बहुत महत्व है। अत: इनकी कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.4-0.7 प्रतिशत जस्ते व फेरस सल्फेट तथा 0.1 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव करें।

कांट-छांट

कागजी नीबू में स्वाभाविक तौर पर कटाई-छंटाई की आवश्यकता नहीं होती है। परंतु रोपण के प्रारम्भिक वर्षों में पौधे को सही आकार देने के लिए जमीन की सतह से लगभग दो फुट की ऊंचाई तक शाखाओं को हटाते रहना चाहिए। बाद के वर्षों में भी सूखी, रोगग्रस्त एवं आड़ी-तिरछी टहनियों को काटते रहना चाहिए। इसके साथ ही जलांकुरों की पहचान करके उनको भी हटा दें।

अंत:फसलीकरण

रोपण के प्रारम्भिक 2-3 वर्षों तक कतारों में खाली पड़ी जगह पर कोई उपयुक्त फसल लेकर कुछ आमदनी की जा सकती है। इसके लिए दलहनी फसलें या ऐसी सब्जियां जिसमें कीट/रोगों का आक्रमण कम होता हो, उगाना उपयुक्त होता है। दलहनी फसलों में मूंग, मटर, उड़द, लोबिया और चना आदि उगाकर आमदनी बढ़ने के साथ जमीन की उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाने में मदद मिलती है।

फलों का फटना

कागजी नीबू में वर्षा के मौसम में अक्सर फल फटने की समस्या देखी जा सकती है। फल प्राय: उस समय फटते हैं, जब शुष्क मौसम में अचानक वातावरण में आर्द्रता आ जाती है। अधिक सिंचाई या सूखे के लंबे अंतराल के बाद वर्षा का होना भी फल फटने का मुख्य कारण है। प्रारंभिक अवस्था में फलों पर छोटी दरारें बनती हैं, जो बाद में फलों के विकास के साथ बड़ी हो जाती हैं। इससे आर्थिक रूप से बहुत अधिक नुकसान होता है। फलों को फटने से रोकने के लिए:

- उचित अंतराल पर सिंचाई करें
- जिब्रेलिक अम्ल 40 पी.पी.एम. या एन.ए.ए. 40, पी.पी.एम या पोटेशियम सल्फेट 8 प्रतिशत घोल
- छिड़काव अप्रैल, मई एवं जून में करें।

तुड़ाई एवं उपज

फलों की तुड़ाई का सही समय उगायी जाने वाली किस्म एवं मौसम पर निर्भर करता है। कागजी नीबू के फल 150-180 दिनों में पककर तैयार हो जाते हैं। फलों का रंग जब हरे से हल्का पीला होना शुरू हो जाए तो, फलों की तुड़ाई प्रारंभ कर देनी चाहिए। फलों को तोड़ते समय यह ध्यान रखें कि फलों के छिलके को किसी प्रकार का नुकसान न पहुंचे। कागजी नीबू की किस्म, मौसम और प्रबंधन इत्यादि पर निर्भर करती है।

गूटी विधि से तैयार नीबू के पौधे

बगीचे की स्थापना

नीबू के पौधे 6 × 6 या 5 × 5 मीटर की दूरी (कतार से कतार व पौधे से पौधे) पर लगाए जाते हैं। इस दूरी की दर से प्रति हैक्टर क्षेत्रफल में लगभग 277 से 400 पौधे लग जाते हैं। सर्वप्रथम जिस खेत में पौधे लगाने हैं उसकी अच्छी तरह जुताई करके समतल कर लें। उसके पश्चात उचित दूरी पर रेखांकन करके उन स्थानों पर 3 × 3 × 3 फुट व्यास के गड्ढों की खुदाई करें। गड्ढों से निकली ऊपरी भाग की मृदा में प्रत्येक गड्ढे की दर से 15-20 कि.ग्रा. गोबर की खाद मिलाकर गड्ढों को भर दें। दीमक की रोकथाम के लिए क्लोरोपायरीफॉस 20 मि.ली. दवा प्रति गड्ढे की दर से पानी में मिलाकर डालें। गड्ढा भरते समय ध्यान रखें कि यह धरातल से 15-20 सें.मी. ऊपर उठा हुआ हो। गड्ढा भरने के बाद सिंचाई कर दें अथवा वर्षा का इंतजार करें, जिससे पानी से गड्ढे की मृदा नीचे बैठ जाए। पौधों का रोपण मानसून के समय (जुलाई-अगस्त) में करते हैं परंतु सिंचाई की पर्याप्त सुविधा होने पर यह कार्य फरवरी-मार्च में भी कर सकते हैं।

लीफ माइनर से ग्रसित पत्तियां

फल फटना

सामान्यत 1000-1200 फल प्रति पौधा प्रति वर्ष मिल जाते हैं।

प्रमुख कीट एवं रोग

नीबू में कई तरह के कीटों एवं रोगों का आक्रमण होता है यदि सही समय पर इनकी पहचान करके उचित प्रबंधन नहीं किया जाये तो किसानों को बहुत आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। कागजी नीबू में लगने वाले कुछ हानिकारक कीट एवं रोग निम्नलिखित हैं:

नीबू तितली (लेमन बटरफ्लाई)

इसकी इल्लियां (सूंडियां) मुलायम पत्तियों के किनारों से मध्य शिरा तक खाकर क्षति पहुंचाती हैं। कई बार तो ये पूरे पौधे को ही पत्तीविहीन कर देती हैं। नर्सरी एवं छोटे पौधों की मुलायम एवं नई पत्तियों पर इसका प्रकोप बहुत ज्यादा होता है। छोटी अवस्था में यह कीट, चिड़ियों की बीट जैसी दिखाई देती है। परंतु बाद में पत्ती के रंग-रूप की हो जाती है, जिससे यह बहुत कम दिखाई देती है। इस कीट का प्रकोप वर्षा के मौसम (जुलाई-अगस्त) में अधिक होता है।

कीट नियंत्रण

- मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. एक मि.ली. या क्विनालफॉस 25 ई.सी. 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
- पौधों की संख्या अधिक नहीं हो तो लटों को पौधों से चुनकर मृदा में दबा दें अथवा मिट्टी के तेल में डालकर मार दें।

लीफ माइनर

इस कीट के लार्वा (सूंडी) पत्ती की निचली सतह पर चांदी के समान चमकीली, टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगें बना देते हैं। इससे प्रभावित पत्तियों के किनारे अंदर की तरफ मुड़कर सूखने लग जाते हैं। इसका प्रकोप भी नई पत्तियों पर अधिक होता है, जिससे पौधे की वृद्धि रुक जाती है। कीटों की संख्या अधिक होने पर ये लक्षण पत्ती के ऊपरी भाग पर भी दिखाई देते हैं। यह नीबू में कैंकर रोग के फैलाव में भी सहायक होता है।

नीबू तितली के विभिन्न रूप

कीट नियंत्रण

- 750 मि.ली. ऑक्सीडेमेटान मिथाइल (मेटासिस्टाक्स) 25 ई.सी. या 625 मि.ली. डाइमेथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. या 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (न्यूवाक्रान/मोनोसिल) 36 डब्ल्यू.एस. सी. को 500 लीटर पानी में प्रति एकड़ की दर से छिड़कें।
- अधिक प्रकोप होने की दशा में प्रभावित भागों को काटकर नष्ट कर दें एवं उसके पश्चात दवा का छिड़काव करें।
- बगीचे को हमेशा साफ-सुथरा रखें।

सिट्रस कैंकर

सिट्रस सिल्ला

इस कीट के शिशु एवं वयस्क दोनों ही नई पत्तियों तथा पौधों के कोमल भागों से रस चूसते हैं। इसके परिणामस्वरूप प्रभावित भाग नीचे गिर जाते हैं और धीरे-धीरे टहनियां सूखने लग जाती हैं। ये कीट सफेद शहद जैसा चिपचिपा पदार्थ भी स्रावित करते हैं, जिसमें फफूंद का आक्रमण बढ़ जाता है। यह चिपचिपा पदार्थ जहरीला होता है, जिसके कारण पत्तियां सिकुड़ जाती हैं और फिर ये नीचे गिर जाती हैं। इसका प्रकोप भी वर्षा एवं बसन्त ऋतु में अधिक होता है। यह कीट 'ग्रीनिंग' नामक रोग फैलाने में भी सहायक होता है।

कीट नियंत्रण

- पौधे के ग्रसित भागों को काटकर दबा दें अथवा जला दें।
- फरवरी-मार्च, जून-जुलाई तथा अक्टूबर-नवंबर में या कलिका फूटते ही मोनोक्रोटोफॉस 0.7 मि.ली. या डायमेथोएट 0.8 मि.ली. या क्विनॉलफॉस 1 मि.ली. या एसीफेट 1 ग्राम दवा का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकता हो तो यह छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर पुन: दोहरायें।
- कभी भी बगीचे के आसपास मीठे नीम का पौधा नहीं लगायें। ■

फल और सब्जियों का प्रसंस्करण एवं प्रौद्योगिकी

प्रगतिका मिश्र और **रवि शंकर**

फल एवं सब्जियां मानव आहार के आवश्यक घटक हैं। ये पौष्टिक पदार्थ प्रदान करते हैं। इनसे शरीर को मुख्य रूप से कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, खनिज, जल व रेशा आदि प्राप्त होता है। भारत, फल और सब्जियों का उत्पादन करने वाला दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा देश है। जलवायु की विविधता के कारण पूरे वर्ष इनका उत्पादन हमारे देश के अलग-अलग क्षेत्रों में होता है। इनमें जल की मात्रा अधिक होने से ये शीघ्र नष्ट होने वाले उत्पाद होते हैं। ये आसानी से सूक्ष्मजीवों जैसे जीवाणु, फफूंद और खमीर द्वारा खराब कर दिए जाते हैं। एंजाइम, रासायनिक क्रिया आदि भी इन्हें क्षतिग्रस्त एवं गुणवत्तारहित कर देते हैं। क्षतिग्रस्त होने से बचाने के लिए इनका परिरक्षण अति आवश्यक है। एक अनुमान के अनुसार 20 से 30 प्रतिशत फल एवं सब्जियां उत्पादन क्षेत्र से उपभोक्ताओं के पास पहुंचने के पहले नष्ट हो जाती हैं। भारत में 2 प्रतिशत से भी कम फल और सब्जियों का प्रसंस्करण किया जाता है, जबकि विकसित देशों में यह 50 से 80 प्रतिशत तक है। अत: यह स्पष्ट है कि भारत में फल और सब्जियों के प्रसंस्करण में उद्यमिता के विकास की अपार संभावनाएं हैं।

एक ही फल को विभिन्न उत्पादों में प्रसंस्करित किया जा सकता है, जिसे जरूरत के हिसाब से देश अथवा विदेशों में भेजा जा सकता है। इससे विदेशी मुद्रा की प्राप्ति की जा सकती है। भारत से निर्यात किये जाने वाले उत्पादों में प्रसंस्करित फल एवं सब्जियां भी शामिल हैं। इनमें प्रमुख हैं-फल गूदा या पल्प, फल रस, चटनी, सूखे हुए एवं प्रशीतित फल व सब्जियां तथा डिब्बाबंद फल एवं सब्जियां आदि।

फल और सब्जियां मौसमी होती हैं और किसी खास मौसम में इनकी प्रचुर मात्रा उपलब्ध होती है। अत: परिरक्षण द्वारा मूल्य संवर्धन सहित इनकी भंडारण क्षमता को बढ़ाकर उपयोगी उत्पाद के रूप में वर्षभर इनका लुत्फ उठाया जा सकता है। इसके साथ ही आमदनी एवं रोजगार के अवसरों को भी बढ़ाया जा सकता है।

फलों एवं सब्जियों को सूक्ष्मजीवों से बचाने के लिए दो मूल सिद्धांत हैं। सबसे पहले इनके सूक्ष्मजीवों को नष्ट करना चाहिए और दूसरा बाहर के सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाले संक्रमण को रोकना चाहिए। दूसरे सिद्धांत के अनुसार इनके वातावरण में परिवर्तन कर दिया

[1]विषय वस्तु विशेषज्ञ (गृह विज्ञान); [2]कार्यक्रम समन्वयक, जीपीटी-कृषि विज्ञान केन्द्र, गोदरा

जाता है, जिससे अनचाहे जीवों की वृद्धि को रोका जा सकता है या कम कर दिया जाता है। इन्हीं दो सिद्धांतों को अपनाकर फल एवं सब्जियों का परिरक्षण करना चाहिए। परिरक्षण के दौरान इस बात का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है कि परिरक्षित किये जाने वाले उत्पाद के मौलिक अभिलक्षण में न्यूनतम परिवर्तन हो। इसके साथ ही परिरक्षण के बाद परिरक्षित पदार्थ की पौष्टिकता भी बनी रहनी चाहिए।

फल और सब्जियों के परिरक्षण की अनेक विधियां हैं। इनका प्रयोग फल और सब्जियों की अवस्था, किस्म व उपयोग, परिरक्षण की अवधि, पौष्टिकता इत्यादि कई बातों पर निर्भर करता है।

विभिन्न फलों एवं सब्जियों का परिरक्षण

टमाटर से निर्मित संरक्षित पदार्थ

सब्जियों से तैयार होने वाले संरक्षित उत्पादों में टमाटर का स्थान प्रमुख है। इससे सॉस, कैचप (चटनी), टमाटर क्रश, अचार आदि तैयार कर मूल्य संवर्धन किए जा सकते हैं।

फलों के रस एवं शर्बत का परिरक्षण

गर्मियों में फलों का रस एवं शर्बत का प्रचलन अब घर-घर में बढ़ता जा रहा है। विज्ञान की प्रगति ने अब फलों की उत्पादकता इतनी बढ़ा दी है कि इनसे निर्मित उत्पादों का संरक्षण अनिवार्य हो गया है।

फलों को रस एवं शर्बत दोनों रूप में पेय पदार्थ की तरह उपयोग के लिए संरक्षित किया जाता है। आम, अनन्नास, अमरूद, सपोटा, जामुन, लीची, बेल, नारंगी एवं नीबू के रस एवं शर्बत (स्क्वैश) को संरक्षित कर रखा जा सकता है।

फलों का प्रसंस्करण

रस का संरक्षण

फलों के रस को प्रति लीटर 0.12 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट परिरक्षक का प्रयोग करके संरक्षित किया जाता है। जामुन का रस चूंकि बैंगनी रंग का होता है इसलिए इसके आकर्षक रंग को बचाए रखने के लिए सोडियम बेनजोएट परिरक्षक 0.10 प्रतिशत डाला जाता है। नारंगी एवं नीबू के रस संरक्षण में, रस को बहुत हल्का गर्म किया जाता है अन्यथा स्वाद बिगड़ सकता है। नारंगी अथवा नीबू का रस निकालने के लिए सिट्रस जूस एक्स्ट्रैक्टर एवं अनन्नास के लिए बास्केट प्रेस का इस्तेमाल करना चाहिए।

शर्बत का संरक्षण

प्राय: सभी रसदार फलों से 'स्क्वैश' बनाया जा सकता है। प्रति 5 कि.ग्रा. स्क्वैश में 3 ग्राम पोटेशियम मेटाबाई सल्फाइट परिरक्षक का प्रयोग किया जाता है, परंतु जामुन के लिए 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट का प्रयोग होता है। इसे बनाने के लिए निम्नलिखित सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है।

फल का रस: 1 कि.ग्रा. (छना हुआ)

चीनी: डेढ़ कि.ग्रा., नीबू एवं नारंगी में दोगुनी चीनी डाली जाती है।

पानी: 750 ग्राम (चीनी का आधा)

साइट्रिक एसिड: रस के खट्टेपन के अनुसार ढाई से पांच ग्राम प्रति कि.ग्रा. रस के लिए, परंतु नीबू एवं नारंगी में इसकी आवश्यकता नहीं पड़ती है।

आम से निर्मित संरक्षित उत्पाद

आम एक ऐसा फल है जिसका उपयोग हम टिकोले से लेकर पूर्ण पके हुए विकसित फलों के रूप में भी करते हैं। इस फल से विभिन्न प्रकार के संरक्षित उत्पाद तैयार किए जा सकते हैं।

कच्चे आम का स्क्वैश

कच्चे आम (टिकोला) कड़े होते हैं उनसे भी स्क्वैश बनाए जाते हैं। यह गर्म वातावरण से उत्पन्न होने वाले विकारों जैसे 'लू' आदि के लिए उपयुक्त है।

आम की जेली

अधपके आमों की 'जेली' अच्छी होती है। टिकोलों से भी जेली बनाई जा सकती है, जेली बनाते समय अगर आम काफी खट्टा है तो साइट्रिक एसिड डालने की आवश्यकता नहीं है। मीठे आम के रस में 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. चीनी की दर से साइट्रिक एसिड जेली पकाते समय 102^0 सेल्सियस रस का तापमान पहुंचने पर डाला जाता है।

आम का जैम

कच्चे एवं पके दोनों प्रकार के आमों से 'जैम' तैयार होता है। इसमें 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट परिरक्षक थोड़े पानी में घोलकर मिलाते हैं। आम का एसेंस (सुगंध) डालकर इसे स्वादिष्ट बनाया जा सकता है।

आम का हलवा

जैम की तरह ही चीनी मिलाकर पके आम का हलवा तैयार किया जाता है। प्रति कि.ग्रा. गूदे में 50 ग्राम घी डालकर हलवा

अधिकाधिक फलों का प्रसंस्करण है जरूरी

तैयार किया जाता है। इसे 0.05 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट डालकर संरक्षित किया जाता है।

आम का पनीर या बर्फी

टिकोले एवं कच्चे आमों का पनीर ठीक जेली बनाने की विधि के अनुसार ही बनाया जाता है।

आम की चटनी

कच्चे आमों से चटनी को तैयार किया जाता है। चटनी के लिए एक कि.ग्रा. गूदे में चीनी 1 कि.ग्रा. नमक, 100 ग्राम, अदरक 100 ग्राम, सरसों तेल 100 ग्राम, लाल मिर्च 50 ग्राम पीसकर एवं सिरका 500 ग्राम डाला जाता है। ज्यादा दिनों तक रखने के लिए 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट मिलाया जाता है।

आम का मुरब्बा

मुरब्बा बनाने के लिए कच्चे आम का प्रयोग होता है। आम को छीलकर बड़े टुकड़ों में काटकर इसका मुरब्बा तैयार किया जाता है।

आम की डिब्बाबंदी

पके कलमी आम की डिब्बाबंदी की जाती है। सीपिया, लंगड़ा, अल्फांसो, अमन, दशहरी एवं फजली आम की डिब्बाबंदी अच्छी होती है। आम की डिब्बाबंदी कारखाने में ही की जा सकती है।

घरेलू शीतगृह में सब्जी का संरक्षण

ईंट, बालू, बोरा या खस की पट्टी की सहायता से बहुत ही कम खर्च में यह शीतगृह घरेलू या बड़े स्तर पर बनाया जा सकता है। फल एवं सब्जी विक्रेताओं के लिए फलों एवं सब्जियों को ज्यादा दिनों तक ताजा रखने के काम में आते हैं।

सब्जी की मात्रा के अनुसार जमीन पर एक ईंट की चौड़ाई की दो अलग-अलग दीवारें 3 इंच की दूरी पर बनाई जाती हैं। ये दीवारें 3 फुट ऊंची रहनी चाहिए। इस प्रकार एक दोहरी दीवार वाला चैम्बर तैयार हो जाता है। दोनों दीवारों के बीच की जगह को बालू से भर दिया जाता है। चैम्बर को ढकने के लिए खस या पुराने कोष की पट्टी बनाई जाती है। बालू एवं पट्टी को भिगोए रखा जाता है, जिसके लिए ऊंचाई पर बाल्टी में पानी भरकर रख दिया जाता है तथा पाइप की मदद से बालू एवं पट्टी को भिगोए रखने की व्यवस्था की जाती है। इसके लिए पाइप में जगह-जगह छेद करके दीवारों के बीच बालू की ऊपरी सतह पर छोड़ दिया जाता है। पट्टी को पानी का छींटा मारकर या भीगा हुआ बोरा डालकर ठंडा रखा जाता है। ऐसा करने से इस शीतगृह का तापमान कमरे की अपेक्षाकृत कम हो होता है एवं अंदर की आर्द्रता बढ़ जाती है। खासकर गर्मी के दिनों में उक्त शीतगृह में टमाटर 12 दिनों तक, फूलगोभी 8-10 दिनों तक, पालक 2-3 दिनों तक, भिंडी 7-10 दिनों तक एवं परवल 8-10 दिनों तक अच्छी स्थिति में रहता है।

इस तरह इस विधि को अपनाकर फल एवं सब्जियों की क्षति को रोककर इनकी उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।

प्रसंस्करण के लिए तैयार फल

फलों एवं सब्जियों की प्रसंस्करण इकाई

फल एवं सब्जियों का सुखौता

फल और सब्जियों को अच्छी प्रकार साफ पानी से धोकर छोटे-छोटे टुकड़ों में काटने के बाद तेज धूप में सुखाते हैं। सुखावक यंत्र में सुखाने से इनमें उपस्थित पौष्टिकता बची रहती है। इस तरह के सुखावन का कार्य वर्षा एवं बदली के मौसम में भी किया जा सकता है। सुखाये गये उत्पादों का भंडारण पॉलीथीन के छोटे-छोटे थैले/पाउच में सील कर सूखे स्थानों में करना चाहिए।

नारंगी का मार्मलेड

यह जेली के समान नारंगी के रस से बना, जमा हुआ पदार्थ होता है, जिसमें फलों के छिलके भी डले होते हैं।

नारंगी के छिलके की कैंडी

नारंगी के छिलकों से भी कैंडी बनायी जाती है। अच्छे, रोग एवं धब्बारहित नारंगी के फलों से यह तैयार की जाती है।

अमरूद की जेली

अमरूद की जेली बनाने के लिए पूर्णरूप से विकसित (जो हरे एवं कड़े हों) अमरूद लिया जाता है। इन्हें साफ करके गोल-गोल टुकड़ों में उबाल कर जूस निकाला जाता है। इससे जेली तैयार की जाती है। जेली तैयार करते समय जूस को पकाते हुए इसका तापमान 100^0 सेल्सियस तक पहुंच जाने पर 4-5 ग्राम साइट्रिक एसिड प्रति कि.ग्रा. जूस में मिलाते हैं। 106^0-107^0 सेल्सियस पर जब जूस का तापमान पहुंच जाए तो उसे उतार लिया जाता है।

विशेष जानकारी के लिए संपर्क करें:
जीवीटी-कृषि विज्ञान केन्द्र
चकेश्वरी फार्म, गोड्डा-814133

(स्रोत: जीवीटी-कृविके, गोड्डा द्वारा प्रकाशित प्रसार साहित्य के आधार पर)

बेल फल का प्रसंस्करण व भंडारण

योगेश कुमार[1], किपु किरण सिंह महिलांग[2], सौमित्र तिवारी[1] और **यशवंत कुमार[1]**

भारत, दुनिया का सबसे बड़ा वनस्पति उद्यान कहा जाता है। यहां हर प्रकार की औषधीय जड़ी-बूटियां बहुतायत में पाई जाती हैं। बेल को हमारे देश में सबसे महत्वपूर्ण औषधीय फलों में से एक माना जाता है। बेल (एगल मार्मेलोस) को सुनहरा सेब, पवित्र फल, पत्थर सेब, बेल, बेला, सिरफल, मरेडू आदि नाम से भी जाना जाता है। यह मध्यम आकार के पर्णपाती परिवार वृक्षारोपण से संबंधित है। परिपक्वता के सभी चरणों में इस वृक्ष के सभी हिस्से छाल, जड़, पत्तियां और फल, आयुर्वेदिक तथा पारंपरिक दवा में लंबे समय से उपयोग होते आ रहे हैं। पौष्टिक, चिकित्सीय और औषधीय महत्व के अलावा, बेल उत्कृष्ट स्वाद और बहुत आकर्षक रंग का होता है। इसका पका हुआ फल स्वास्थ्य के लिए काफी मूल्यवान होता है। परिपक्व फल सुगंधित, ठंडा और दिखने में आकर्षक होता है।

भारतीय मूल का यह पेड़ प्रागैतिहासिक काल से जाना जाता है। बेल पोषण, पर्यावरणीय और व्यावसायिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। इसके फल विटामिन, खनिजों और फाइबर से समृद्ध होते हैं। इसलिए यह स्वस्थ आहार का एक आवश्यक घटक है। इसके फल को हाथों से खाना आसान नहीं है। विभिन्न उत्पादों के लिए इसे प्रसंस्करित किया जाता है। सभी प्रकार के उत्पादों के लिए, बेल लुग्दी पहली आवश्यकता है।

[1]खाद्य प्रसंस्करण और प्रौद्योगिकी विभाग, बिलासपुर विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़); [2]कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर एंड रिसर्च स्टेशन, कोरिया (छत्तीसगढ़)

मृदा और जलवायु

अच्छी रेतीली बलुई मृदा, धूप और गर्म आर्द्र जलवायु बेल की उपज के लिए उपयुक्त है। हालांकि बेल कठोर प्रकृति के कारण रेतीली, पथरीली, अम्लीय, क्षारीय, लवण प्रभावित मृदा और बंजर भूमि आदि में उगाया जा सकता है।

बेल फल के भौतिक मानक

पैरामीटर	
बाहरी रंग	भूरा व पीला
गूदा रंग	चमकदार पीला
वजन (ग्राम)	11.2
ध्रुवीय व्यास (सें.मी.)	12.9
ट्रांसवर्स व्यास (सें.मी.)	13.3
विशिष्ट गुरुत्वाकर्षण (ग्राम पर सीसी)	1.1
गूदा	68
बीज	1.3
आकार	गोलाकार व लंबाकार

बेल फल पल्प के रासायनिक घटक

तत्व	प्रतिशत
नमी	61
पी-एच	4.9
अम्लता (साइट्रिक एसिड)	0.3

बेल का महत्व

बेल रासायनिक प्रदूषकों के लिए 'सिंक' के रूप में कार्य करता है, क्योंकि यह वायुमंडल से जहरीली गैसों को अवशोषित कर लेता है और उन्हें निष्क्रिय या तटस्थ बनाता है। यह पौधों की उस प्रजाति समूह का सदस्य है, जो 'क्लाइमेट प्यूरीफायर्स' के नाम से जाने जाते हैं। अन्य पौधों की तुलना में ये सूरज की रोशनी में ऑक्सीजन की अधिक मात्रा उत्सर्जित करते हैं। इस पेड़ को 'सुगंधित' प्रजातियों की श्रेणी के तहत भी माना जाता है। इनके फूल अस्थिर वाष्प छिद्रित कार्बनिक पदार्थ की खराब गंध को निष्क्रिय करते हैं या क्षीण करते हैं। इस तरह ये मानव जीवन को बैक्टीरियल हमले से बचाते हैं और पर्यावरण से दुर्गंध हटाते हैं।

क्रूड प्रोटीन	3.6
ऐश	2.8
कच्चे फाइबर	4.8
क्रूड फैट	0.4
टीएसएस ब्रिक्स	36

बेल के खनिज घटक

- फॉस्फोरस
- पोटेशियम
- कैल्शियम
- मैग्नीशियम
- लोहा
- तांबा
- जस्ता

एंटी पोषण सामग्री में

- टेनिन (गैलोटेनिक एसिड)
- ऑक्सालेट्स

बेल के प्रसंस्करण से तैयार उत्पाद

बेल फल की भंडारण गुणवत्ता को लंबे समय तक बनाए रखा नहीं जा सकता है। इसलिए प्रसंस्करण के माध्यम से फल के प्रभावी उपयोग को बढ़ाया जाता है। आम फलों की अपेक्षा इसके ठोस खोल, श्लेष्मा बनावट और कई बीजों के कारण, यह ताजे फल के रूप में अधिक लोकप्रिय नहीं है। फल में उत्कृष्ट सुगंध होती है जो प्रसंस्करण के दौरान भी नष्ट नहीं होती है। बेल में प्रसंस्करण के माध्यम से फलों का मूल्यवर्धन होने की बहुत संभावना है।

इन उत्पादों को अत्यधिक पोषक और औषधीय रूप से महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ आंतरिक और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में आसानी से लोकप्रिय किया जा सकता है।

भंडारण

बेल फल सामान्य तापमान पर 10 से 15 दिनों के लिए संग्रहित किया जा सकता है। परिपक्व अवस्था में इसका फल एक सप्ताह के लिए संग्रहित किया जा सकता है। इसके फल का भंडारण 2 सप्ताह में 30^0 सेल्सियस से 12 सप्ताह में 9^0 सेल्सियस और 85-90 सापेक्ष आर्द्रता में बढ़ाया जा सकता है। पके हुए बेल के फल को उपचार (1000-1500 पीपीएम) के साथ 2-3 महीने पहले उपलब्ध कराया जा सकता है। जनवरी में कटाई के बाद 30^0 सेल्सियस पर फलों को संग्रहित किया जाता है। फल को कृत्रिम रूप से पकाए जाने के लिए 18-24 दिनों का समय प्रर्याप्त होता है। कृत्रिम रूप से पके हुए फल में थोड़ी कम चीनी या स्वाभाविक रूप से पके हुए फल की संरचना में काफी भिन्नता नहीं होती। एक वृक्ष एक मौसम में 800 फलों का उत्पादन कर सकता है लेकिन औसत फसल प्रति वृक्ष 150 से 200 या बेहतर किस्मों में 400 तक है।

औषधीय गुण

- पाचन तंत्र में सुधार
- रक्त की सफाई
- मधुमेह जैसे गंभीर रोग के लिए फायदेमंद
- बेलपत्र से बढ़ता है ऊर्जा स्तर
- लगातार सेवन से गुर्दों व लीवर की समस्या से बचाव
- मलेरिया से बचाव
- कान दर्द में उपयोगी

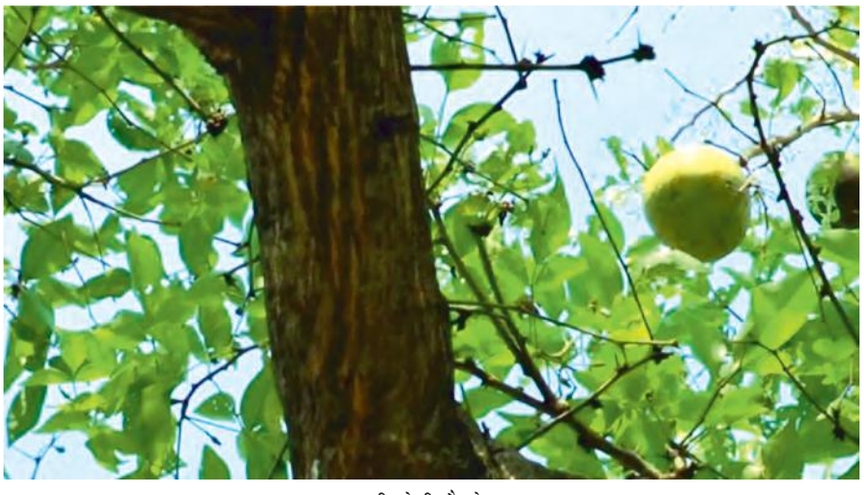

कीटरोधी है बेल

बेल का फल

बेल के विभिन्न उत्पाद

- बेल रस
- बेल वाइन
- बैल कैंडी
- बेल स्लैब
- बेल फल जैम
- निर्जलित बेल
- बेल पाउडर
- बेल पंजीरी
- बेल के अपशिष्ट के प्रसंस्करण उपयोग

गुणवत्ता

आमतौर पर फल लम्बे समय तक बिना गुणवत्ता को प्रभावित किए संग्रहित किए जा सकते हैं।

कीट और रोग

बेल का फल कीट और रोगों से अपेक्षाकृत मुक्त प्रतीत होता है।

गर्मी में ताजे पेय के रूप में लगभग सभी वर्गों द्वारा इसका स्वाद स्वीकार्य है। बेल अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों में काफी उपयोग किया जाता है। मूल्यवर्धित उत्पादों के संदर्भ में इसके व्यावसायिक उपयोग के लिए बहुत अधिक जोर नहीं दिया जा रहा है। व्यावसायिक पैमाने पर इस फल की अप्रत्याशित क्षमता की जांच करने के लिए केंद्रित अनुसंधान की आवश्यकता है। ■

आम के कायिकी विकार

पंकज कुमार[1], के. ऊषा[1] और **अनुपम तिवारी[2]**

आम, अपने विशेष स्वाद एवं पोषण के लिए जाना जाता है। विश्व में आम उत्पादन में भारत अग्रणी है, लेकिन पिछले कुछ वर्षों से इस फसल की उत्पादकता एवं गुणवत्ता में लगातार कमी का आकलन किया गया है। इस कमी के एक से अधिक कारणों की खोज हो चुकी है जैसे-जलवायु परिवर्तन, पोषक तत्वों का कुप्रबंधन, मानवजनित असंतुलन, विभिन्न आनुवंशिकीय विकार, जीवजनित रोग इत्यादि। आम में लगने वाले दैहिक विकार इन सब कारकों में अपना प्रमुख स्थान रखते हैं। इन दैहिक विकारों के भी एक से अधिक जैविक या अजैविक कारण हो सकते हैं। ये दैहिक विकार आम की फसल को जहां नुकसान पहुंचाते हैं, वहीं इनसे संक्रमित फलों के विपणन एवं निर्यात में भी नुकसान झेलना पड़ता है। इससे ये किसान के साथ-साथ देश की अर्थव्यवस्था को भी कमजोर बनाते हैं। इस लेख में आम में लगने वाले कुछ प्रमुख दैहिक विकारों का विवरण दिया गया है।

अनियमित या एकांतर फलत

एकांतर फलत, आम उत्पादकों के लिए एक ज्वलंत समस्या है। इस विकार के कारण उत्पादकों को काफी नुकसान होता है। इसमें एक वर्ष तो भारी फलत होती है, परंतु उसके अगले वर्ष फलत या तो नहीं होती है या बहुत ही कम होती है। जिस वर्ष फल अधिक लगते हैं उस वर्ष अधिक पैदावार होने से बाजार में आमों की उपलब्धता बढ़ जाती है। ऐसे में उत्पादकों को कम मूल्य पर ही आम का विक्रय करना पड़ता है। दूसरी ओर जिस वर्ष आम का उत्पादन नहीं या कम होता है उस वर्ष आय न होने से उनको हानि होती है। प्राय: यह विकार उत्तर भारत की दशहरी, लंगड़ा, चौसा इत्यादि आम की किस्मों में पाया जाता है। दक्षिण भारत की कुछ किस्में जैसे-तोतापुरी, रेड स्माल, बंगलोरा व नीलम नियमित फलत वाली किस्में हैं। परंतु जब ये उत्तर भारत में उगायी जाती हैं, तो इनके फलों की गुणवत्ता कम हो जाती है। इस विकार के मुख्य कारण वृक्षों के फलत की आदत, फलों के साथ नयी वनस्पतिक वृद्धि का न हो पाना, हार्मोन का असंतुलन, कार्बोहाइड्रेट/नाइट्रोजन अनुपात इत्यादि हैं।

प्रबंधन

- सितंबर में पेक्लोब्यूट्राजॉल (पीपी$_{333}$) का 4 ग्राम प्रति पौधे की दर से मृदा प्रयोग या पर्णीय छिड़काव करें।
- आम उत्पादक, जो कि नए बगीचे लगाने की योजना बना रहे हैं, को नियमित फलत वाली किस्मों जैसे-आम्रपाली, मल्लिका, पूसा अरुणिमा, पूसा श्रेष्ठ, पूसा पीतांबर, पूसा लालिमा, पूसा प्रतिभा इत्यादि का चयन करना चाहिए।

आम से लदा वृक्ष

पुराने आम उत्पादकों को अपने बगीचों का जीर्णोद्धार करके उनमें नियमित फलत वाली किस्मों के साथ मुकुलन एवं कलम बंधन कर देना चाहिए। इससे नियमित फलत प्राप्त हो सकता है।

लीफ स्कॉर्चिंग

इस विकार में पौधों की पत्तियां अग्रस्थ भाग से अथवा किनारों पर झुलसी हुई प्रतीत होती हैं। इसके बाद पत्तियां नीचे गिर जाती हैं, जिससे उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यह मुख्यत: मृदा में क्लोराइड आयनों की अधिकता से होता है। यह पोटाश की अनुपलब्धता को बढ़ावा देता है। यह विकार लवणीय मृदा अथवा जहां खारे पानी से सिंचाई की जाती है या जहां म्यूरेट ऑफ पोटाश को उर्वरक के रूप में दिया जाता है, वहां प्रमुख रूप से पाया जाता है।

प्रबंधन

प्रभावित पेड़ों पर नए कल्ले निकलते समय 2 प्रतिशत पोटेशियम सल्फेट के 4-5 पर्णीय छिड़काव पाक्षिक अंतराल पर करने से इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

आम का गुम्मा या गुच्छा रोग

उत्तर भारत के आम उत्पादकों के लिए एक बहुत ही भयावह रोग है। यह रोग सर्वप्रथम बिहार में वर्ष 1891 में देखा गया था। परंतु अब इस रोग ने पंजाब, दिल्ली और उत्तर प्रदेश इत्यादि राज्यों को भी अपनी गिरफ्त में

[1]भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नयी दिल्ली; [2]कृषि विज्ञान संस्थान, बीएचयू, वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

सारणी : कायिकी विकारों से ग्रसित आम के बगीचों में रोग प्रबंधन के उपरांत बगीचों की अनुमानित उपज (क्विंटल/हैक्टर) तथा कुल आय

1. कायिकी विकारों से ग्रसित आम के बगीचों की अनुमानित उपज (क्विंटल/हैक्टर) एवं कुल आय										
वृक्ष की उम्र (वर्षों में)	6	7	8	9	10	11	12	13	14	≥ 15
अनुमानित उपज (क्विंटल/हैक्टर)	12	17	25	30	35	40	45	50	55	60
अनुमानित आय (10 रुपये/कि.ग्रा./हैक्टर)	12000	17,000	25,000	30,000	35,000	40,000	45,000	50,000	55,000	60,000
उत्तर भारत से कुल आय (1,012,450 हैक्टर क्षेत्रफल से आय बिलियन रुपये में)	12.149	17.211	25.311	30.373	35.435	40.498	45.560	50.622	55.684	60.747
2. कायिकी विकारों के प्रबंधन के उपरांत बगीचों से अनुमानित उपज(क्विंटल/हैक्टर) एवं कुल आय										
अनुमानित उपज (क्विंटल/हैक्टर)	25	35	50	60	70	80	90	100	110	120
अनुमानित आय (10 रुपये/कि.ग्रा./हैक्टर)	25,000	35,000	50,000	60,000	70,000	80,000	90,000	1,00,000	1,10,000	1,20,000
उत्तर भारत से कुल आय (1,012,450 हैक्टर क्षेत्रफल से आय बिलियन रुपये में)	25.311	35.435	50.622	60.747	70.871	80.996	91.120	101.24	111.37	121.49

दशहरी प्रजाति के आम में कम फलत

ले लिया है, जहां पर लगभग 50 प्रतिशत से अधिक वृक्ष इस रोग से प्रभावित हैं। गुजरात, बिहार, पश्चिम बंगाल और ओडिशा में भी यह रोग फैल रहा है, वहीं दक्षिण भारत इससे लगभग मुक्त है। आम की उगाई जाने वाली लगभग सभी किस्में जैसे बम्बई हरा, दशहरी, लखनऊ सफेदा तथा चौसा इस रोग के प्रति संवदेनशील होती हैं।

लक्षण

आम का गुम्मा रोग मुख्यत: दो प्रकार (वनस्पतिक एवं पुष्प) का होता है। वानस्पतिक गुम्मा रोग मुख्य रूप से पौधशाला में उगाई गई पौध में देखने को मिलता है। वहीं पुष्पगुच्छा रोग में सारे फूल, गुच्छों का रूप धारण कर लेते हैं। पुष्पगुच्छों के पैनिकल विकृत एवं अनुत्पादक, हरे रंग

लीफ स्कॉर्चिंग

प्रबंधन रणनीतियां

- अक्टूबर में 2 ग्राम अल्फा नेफ्थलीन एसिटिक एसिड प्रति 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इसके बाद पुष्पों को कलिका प्रस्फुटन अवस्था के समय तोड़ देना चाहिए।
- इसके बीजाणु हवा द्वारा फैलकर कलिकाओं में रोग फैलाते हैं। इसलिए धतूरा, नीम तथा मदार की पत्तियों के रस का काढ़ा बनाकर गौ मूत्र के साथ पुष्पन से पहले एवं पुष्प कलिकाएं बनते समय छिड़काव करने से इस रोग का प्रकोप कम हो जाता है। यह काढ़ा पोषक तत्वों से भरपूर होता है, जिससे फल का गिरना भी नियंत्रित होता है।
- आम में लगने वाले उपर्युक्त कायिकी विकारों को संस्तुत प्रबधंन तकनीकियों का सही समय एवं सही मात्रा में प्रयोग करके नियंत्रित कर सकते हैं।

के और नर फूलों का एक सघन द्रव्यमान लिए हुए होते हैं। मुख्य और माध्यमिक रैचिस मोटी और छोटी होती है, जिसमें पुष्पों के सहपत्र, बाह्यदलपुंज व दलपुंज अपेक्षाकृत बड़े होते हैं। पुष्पगुच्छों में बंध्य नरों एवं द्विलिंगी पुष्पों का अनुपात बढ़ जाता है, जिससे फल नहीं बनते हैं। बाद में कभी-कभी इन गुच्छों में से छोटी-छोटी पत्तियां ठीक तरह से निकल आती हैं। इस विकार की जटिलता सांस्कृतिक, पोषण तथा अन्य कारकों जैसे कुटकी, कवक, विषाणु, हार्मोन का असंतुलन इत्यादि से संबंधित

आम का गुच्छा रोग

होती है। वर्तमान समय में यह सिद्ध हो चुका है कि फ्यूजेरियम मेगिफेरी नामक कवक इस समस्या से अत्यधिक संबंधित है। इस कवक के विकास हेतु 25^0-28^0 सेल्सियस तापमान तथा 65 प्रतिशत से अधिक सापेक्षिक आर्द्रता अनुकूल होती है। नुकसान की सीमा, रोग का प्रकोप मौसम एवं जलवायु की भिन्नता की स्थिति पर निर्भर करती है। प्रभावित पेड़ों में उपज नुकसान 50-80 प्रतिशत तक हो सकता है, किन्तु गंभीर मामलों में यह हानि शत प्रतिशत हो सकती है। इस रोग की वृद्धि में तापमान प्रमुख भूमिका निभाता है, जिसके बढ़ने से रोग की घटनाएं कम हो जाती हैं। लगभग 50-70 प्रतिशत वृक्ष उत्तर-पश्चिमी, उत्तर-पूर्वी और उत्तर-दक्षिणी भारत में इस रोग से ग्रसित हैं। जम्मू में 21-45 प्रतिशत वृक्षों में गुच्छा रोग दर्ज किया गया है। उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक 86 प्रतिशत हानि इस रोग के कारण होती है।

आम उत्पादकों द्वारा अर्जित अनुमानित उपज और आर्थिक आय एवं कायिकीय विकारों से प्रभावित फसल और अनुशंसित प्रबंधन रणनीतियों का पालन करने के बाद का तुलनात्मक अध्ययन सारणी में दिखाया गया है। ■

कैसे तैयार करें सब्जियों के पौधे

सब्जियों की पौध तैयार करना एक महत्वपूर्ण पहलू है। इस पर किसान बहुत कम ध्यान दे पाते हैं। स्थिति यह है कि प्राय: किसान महंगे बीज लाकर बड़े हौसले के साथ पौधशाला में बीज की बुआई करते हैं। इसके बाद वे पौध तैयार होने और खेत में रोपण करने एवं पैसा कमाई की सोचते हैं, अक्सर यह स्वप्न साकार नहीं होता। इसका कारण है कि पौधशाला में पौध गल जाती है या मर जाती है। ऐसी स्थिति में न तो उनके पास समय रहता है कि पुन: पौध तैयार करें और न ही कहीं पौध उपलब्ध हो पाती है। इसके परिणामस्वरूप वे इधर-उधर भाग-दौड़ करते हैं कि कहीं से पौध उपलब्ध हो जाये। पौध मिलने पर वे न तो किस्मों का ख्याल करते हैं न ही उसके प्रजातीय गुणों का और रोपण कर देते हैं। इस स्थिति में अच्छी फसल नहीं हो पाती है। सही ढंग से पौध तैयार किए जाने के बारे में इस लेख में प्रकाश डाला गया है।

कमलेश अहिरवार[1], वीणा पाणि श्रीवास्तव[2], उत्तम कुमार त्रिपाठी[3] और राजीव कुमार सिंह[4]

जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्र, छतरपुर (मध्य प्रदेश)

किसान, वैज्ञानिकों के सुझाव पर महंगे बीज खरीद कर लाते हैं। इन बीजों से कैसे पौध तैयार करें, इस पर ध्यान नहीं देते। ऐसे में उन्हें आशातीत सफलता अक्सर नहीं मिल पाती है।

पौधशाला की तैयारी

पौधशाला की मृदा की एक बार गहरी जुताई या फावड़े की सहायता से गुड़ाई करें। इसके बाद जुताई या गुड़ाई करके मृदा को भुरभुरी बना लें तथा सभी खरपतवार निकाल दें। प्रति वर्ग मीटर की दर से 2 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद या पत्ती की खाद या 600 ग्राम केंचुए की खाद डालकर मृदा में अच्छी प्रकार मिला दें। इससे बीज के जमाव में सुगमता होती है। यदि पौधशाला की मृदा भारी है, तो उसमें प्रति वर्ग मीटर की दर से 2 से 3 कि.ग्रा. बालू रेत अवश्य मिलायें।

भूमि शोधन

हानिकारक जीवाणुओं से बचाव के लिए भूमि शोधन जरूरी है अन्यथा मृदा में पहले से उपस्थित हानिकारक जीवाणु पौधों को क्षति पहुंचाते हैं। ये न केवल पौध तैयार करने तक ही सीमित रहते हैं, बल्कि खेत में रोपण के बाद भी पौधों को हानि पहुंचाते हैं। भूमि शोधन कई प्रकार से किया जा सकता है।

सोलेराइजेशन

मई-जून में जब सूर्य तेजी से चमकता है और वायुमण्डल का तापमान 40^0 सेल्सियस के ऊपर चला जाता है। (उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्र) तो ऐसे समय में जितने क्षेत्र में पौध तैयार करनी हो उसकी हल्की सिंचाई करके 200 गेज की पॉलीथीन की सफेद पारदर्शी चादर से ढक देते हैं। इस चादर के चारों तरफ के किनारे गीली मृदा से दबा देते हैं जिससे अंदर की गर्म हवा बाहर न निकलने पाये और मृदा में उपस्थित सभी जीवाणु नष्ट हो जायें। लगभग 5-6 सप्ताह बाद पॉलीथीन की चादर हटा देते हैं। इसके बाद खेत की अच्छी प्रकार से गुड़ाई करके क्यारियां बनाकर बीज की बुआई करते हैं।

फफूंदनाशक

बॉविस्टीन की 5 से 6 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मीटर की दर से पौधशाला की मृदा में डालकर 15 से 20 सें.मी. की गहराई तक अच्छी प्रकार मिला दें। यदि दवा को सीधे मृदा में मिलाने में असुविधा हो रही हो तो दवा की मात्रा कम्पोस्ट खाद या गोबर की खाद में मिलाकर एक समान क्यारी में डालकर मृदा में मिलाएं।

कीटनाशक

भूमि में अनेक प्रकार के सूक्ष्मजीव, कीड़े-मकोड़े विद्यमान रहते हैं, जो अनुकूल

नर्सरी में पौधे

[1]वैज्ञानिक, उद्यानिकी; [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक सह प्रमुख; [3]वरिष्ठ शोधकर्ता; [4]वैज्ञानिक, सस्य

वातावरण मिलने पर सक्रिय हो जाते हैं। इनमें पौधों के बचाव के लिए फ्यूराडॉन की 5 ग्राम मात्रा प्रति वर्ग मीटर पौधशाला की क्यारी में डालकर मृदा में अच्छी प्रकार मिलाने के बाद क्यारी में बीज की बुआई करें।

बीजोपचार

बीजों का बाविस्टीन नामक दवा से 2 से 3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करें।

क्यारी बनाने की तैयारी

मुख्यत: वर्षा ऋतु में पौध तैयार करने के लिए 3 से 5 मीटर लंबी व 1 मीटर चौड़ी तथा जमीन की सतह से 15 से 20 सें.मी. ऊंची उठी हुई क्यारियां बनायें। दो क्यारियों के बीच में 30 सें.मी. स्थान अवश्य छोड़ें, इससे वर्षा का पानी नाली से होता हुआ बाहर निकल जाता है तथा क्यारी ऊंची करने के लिए मृदा इसी स्थान से मिल जाती है। इसके साथ-साथ खरपतवार निकालने और कीट व फफूंदनाशक दवा के प्रयोग करने में सुविधा होती है।

कतारों में बीज की बुआई

यह विधि सर्वोत्तम मानी जाती है, क्योंकि सभी पौधे लगभग एक समान दूरी पर रहने के कारण स्वस्थ व मजबूत होते हैं। इस विधि में सर्वप्रथम क्यारी की चौड़ाई के समानांतर 5 सें.मी. की दूरी पर 0.5 सें.मी. गहरी पंक्तियां बना लेते हैं तथा इन्हीं पंक्तियों में बीज लगभग 1.0 सें.मी. की दूरी पर डालते हैं। बीज बोने के बाद उन्हें कम्पोस्ट, मृदा व रेत के मिश्रण (1:1:1) से ढक देते हैं। इस प्रकार से तैयार पौधे घने न होने के कारण पदगलन रोग की समस्या से बच जाते हैं और पौधे स्वस्थ तथा मजबूत रहते हैं।

सिंचाई

प्रारंभ के 5-6 दिनों तक क्यारी की हजारे अथवा स्प्रे पंप की सहायता से हल्की सिंचाई करें व बीज जमने के बाद आवश्यकतानुसार खुली सिंचाई कर सकते हैं। वर्षा ऋतु सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती बल्कि क्यारी की नालियों में उपस्थित अधिक पानी पौधशाला से बाहर निकालना चाहिए।

नर्सरी में पानी का छिड़काव

पौधशाला का समुचित प्रबंधन है आवश्यक

पौधशाला के लिए स्थान का चुनाव

- पौधशाला ऐसे स्थान पर बनानी चाहिए, जहां की जमीन आसपास के क्षेत्र से थोड़ी ऊंची हो तथा खेत में 5-10 प्रतिशत ढलान हो ताकि वर्षा ऋतु का पानी क्यारी से बाहर चला जाये।
- सूर्य का प्रकाश पूरे दिन बराबर उपलब्ध हो ताकि पौधे अच्छी तरह से विकास कर सकें।
- सिंचाई के लिए कुआं, तालाब, बावड़ी, पम्पसेट, ट्यूबवेल, हैंडपम्प, नहर या सिंचाई पाइप उपलब्ध हों ताकि आवश्यकतानुसार सिंचाई कर सकें।
- आवास से कम दूरी पर स्थित हो ताकि जब भी समय मिले पौधशाला की देखरेख कर सकें।
- पौधशाला के लिए चयनित स्थान की मृदा भारी न हो, बल्कि हल्की हो। बलुई दोमट और मृदा का पी-एच मान 7 के आसपास हो ताकि बीज का जमाव सुचारू रूप से हो सके। इस प्रकार स्थान का चुनाव करने से पौध तैयार करने में अधिक सुगमता होती है।

पौध उखाड़ने के 4 से 5 दिनों पूर्व सिंचाई बंद कर दें, ताकि पौधों में प्रतिकूल वातावरण सहन करने की क्षमता विकसित हो जाये व पौधे कठोर हो जायें। पौध उखाड़ने से पहले हल्की सिंचाई कर दें।

क्यारियों से घास-फूस की परत हटाना

क्यारियों से घासफूस की परत, जो बीज बुआई के बाद उग गई थी, को समय से हटा लेना चाहिए। यह सावधानीपूर्वक रखनी चाहिए कि जैसे ही 50 प्रतिशत बीजों से सफेद धागेनुमा आकार (अंखुआ) निकलते दिखें, पुआल या सरपत, जिससे भी क्यारी ढकी हो, हटा लें। अन्यथा मूलांकुर (अंखुआ) बड़ा होने पर पौधे कमजोर होकर जड़ के पास से ही गल कर गिरने लगते हैं। विभिन्न सब्जियों में यह अवस्था अलग-अलग समय में आती है।

खरपतवार नियंत्रण

क्यारियों में यदि खरपतवार उग आयें तो उन्हें बराबर निकालते रहना चाहिए।

पौध सुरक्षा

पदगलन

पौधशाला में प्राय: यह देखा जाता है कि पौधे पदगलन रोग, जो विभिन्न फफूंद (जैसे पीथियम, राइजोक्टोनिया, फाइटोफ्थोरा या फ्यूजेरियम) से फैलता है, के कारण जमीन की सतह से पौधे गल कर गिरने लगते हैं। देखते ही देखते 2-3 दिनों में ज्यादातर पौधे जड़ों के पास से गलकर जमीन पर गिर जाते हैं और सूख जाते हैं। बीज और पौधशाला की मृदा का उपचार करने के उपरांत ही बीज की बुआई करें। यदि बीज जमने के बाद इस रोग का प्रकोप हो तो बचाव के लिए बाविस्टीन नामक दवा की 2.5 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर पौधशाला की मृदा को तर करें, जिससे रोग का फैलाव रुक जाता है। यदि ऐसा करने के बावजूद भी पौधे गलकर गिर रहे हों तो उर्वरक मिश्रण (मृदा, गोबर की सड़ी खाद व बालू 1:1:1 अनुपात में) को बाविस्टीन से संचारित करें। ऐसे में पौधे गलकर नहीं गिरते, क्योंकि पौधे के कमजोर स्थान पर मृदा डाल देने पर गलने वाले स्थान के ऊपर से नयी जड़ें निकल आती हैं और पौधा मरने से बच जाता है।

बीज अंकुरण के बाद नीम की पत्तियों को हटाना

सारणी : खेत के लिए बीज एवं क्षेत्र की आवश्यकता

क्र.सं.	सब्जी	बीज की मात्रा (हैक्टर)	क्षेत्र (वर्ग मीटर)
1.	टमाटर संकर	300 ग्राम	75-80
	टमाटर मुक्त परागित	400-500 ग्राम	100-110
2.	बैंगन	00-500 ग्राम	100-110
3.	मिर्च	00-500 ग्राम	100-120
4.	फूल गोभी (अगेती)	00-500 ग्राम	100-120
	फूल गोभी (समय से बुआई)	00-400	100-110
5.	प्याज	8-10 कि.ग्रा.	350-400

क्यारियों को ढकना

क्यारियों में बीज की बुआई करने के उपरांत बीजों को ढकना अति आवश्यक है। इसके बाद क्यारियों को स्थानीय स्तर

क्यारी को पलवार से ढकते हुए

पर उपलब्ध पुआल, सरपत, गन्ने के सूखे पत्ते, नरई या अन्य लंबे घासफूस की पतली तह से ढकते हैं। इससे नमी बनी रहती है और सिंचाई करने पर पानी सीधे ढके हुए बीजों पर नहीं पड़ता। अन्यथा उर्वरक मिश्रण बीजों पर से हट जायेगा और बीज का जमाव प्रभावित होगा।

पत्तीमोड़क विषाणु

यह विषाणु रोग स्वयं नहीं फैलता बल्कि इसको फैलाने वाला दूसरा वाहक होता है, जिसे सफेद मक्खी के नाम से जाना जाता है। यह अत्यन्त छोटी कम दिखाई पड़ने वाली सफेद रंग की मक्खी होती है। यह विषाणु रोग के कीटाणु को एक पौधे से दूसरे पौधे पर फैलाती है। इस रोग से प्रभावित पत्तियां सिकुड़कर टेढ़ी-मेढ़ी, मोटी, घुमावदार व छोटी हो जाती हैं। इसके बचाव के लिए पौधशाला में बीज की बुआई से पहले फ्यूराडान 3-5 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से पौधशाला की मृदा में छिड़ककर मिला देते हैं। बीज जमने के बाद मोनोक्रोटोफॉस या मेटासिस्टॉक्स दवा की 1.5 मि.ली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने के बाद क्यारी को एग्रोनेट (जाली) से ढकते हैं। ढकने के लिए आसपास उपलब्ध बांस की पतली डालियां या लोहे की 3 सूत मोटी छड़ को धनुषाकार अवस्था में 'द' के रूप में 1.0 से 1.0 मीटर की दूरी पर क्यारियों के ऊपर गाड़ दें। इसके ऊपर एग्रोनेट को फैलाकर चारों तरफ से किनारों को मृदा से दबा दें, ताकि कोई कीट या मक्खी जाली के अंदर प्रवेश न कर सके। आशंका हो कि कोई मक्खी अंदर रह गई होगी तो 2-3 दिनों बाद कीटनाशक दवा का छिड़काव पुन: कर दें। सिंचाई इत्यादि जाली के ऊपर से ही हजारे की सहायता से करते रहें। ■

विषाणु रोग

बीज की पंक्तियों में बुआई

गाजर की उन्नत खेती

दलपत सिंह और **पी. आर. मेघवाल**
भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर (राजस्थान)

गाजर की खेती पूरे देश में की जाती है। यह एक महत्वपूर्ण जड़ वाली सब्जी फसल है। इसको कच्चा एवं पकाकर दोनों ही तरह से उपयोग में लिया जाता है। इसका उपयोग सब्जी, सलाद, अचार और मिठाई आदि के लिए किया जाता है। इसमें कैरोटिन और विटामिन 'ए' प्रचुर मात्रा में मिलता है। यह मनुष्य के शरीर के लिए बहुत ही लाभदायक है। इसके सेवन से रक्त में वृद्धि होती है। कच्ची गाजर का जूस पीने से कब्ज दूर होती है। यह पेट के कैंसर और पीलिया के इलाज में भी बहुत उपयोगी है। गाजर की हरी पत्तियों में बहुत ज्यादा पोषक तत्व पाये जाते हैं, जैसे कि प्रोटीन, खनिज, विटामिन आदि। इसकी हरी पत्तियां मुर्गियों का चारा बनाने में काम आती हैं। गाजर मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, असोम, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, पंजाब एवं हरियाणा में उगाई जाती है।

गाजर, शीतोष्ण जलवायु का पौधा है, परंतु गर्म जलवायु में भी यह आसानी से पनपता है। वृद्धि अवस्था में तापमान अधिक रहने से इसके रंग व स्वाद में कमी आ जाती है। इसके बीजों का अंकुरण 7^0-28^0 सेल्सियस तापमान पर सफलतापूर्वक हो जाता है। 15^0-18^0 सेल्सियस तापमान गाजर की वृद्धि और रंग के लिए सबसे ज्यादा उपयुक्त है। अगेती बुआई के लिए हमेशा एशियाई किस्में ही उगानी चाहिए, क्योंकि इसमें अधिक तापमान सहन करने की क्षमता होती है।

भूमि का चयन एवं तैयारी

गाजर के लिए उचित जल निकास वाली, गहरी ढीली, दोमट भूमि सर्वोत्तम रहती है। भूमि में कंकड़-पत्थर व बिना सड़ी-गली खाद उपलब्ध होती है तो जड़ें खराब हो जाती हैं तथा शाखीय जड़तंत्र बन जाता है। गाजर की बुआई से पूर्व 3-4 जुताइयां करके अच्छी प्रकार से मृदा को भुरभुरा बना लेना चाहिए। इसकी अच्छी खेती के लिए 30 सें.मी. गहराई तक भुरभुरी मृदा उत्तम रहती है।

बुआई का समय

गाजर की बुआई उसकी किस्म पर निर्भर करती है। यूरोपियन किस्मों की बुआई मार्च से जुलाई तक की जाती है, जबकि एशियाई किस्मों की बुआई अगस्त से अक्टूबर तक की जाती है। पहाड़ी क्षेत्रों के लिए इसकी बुआई मार्च से जुलाई तक की जाती है।

बीज की मात्रा: एक हैक्टर क्षेत्र के लिए 8-10 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बुआई और दूरी

इसकी बुआई समतल क्यारियों या फिर मेड़ों पर की जाती है। इसके लिए कतार से कतार की दूरी 35 से 45 सें.मी. और पौधे से पौधे की दूरी 7 से 10 सें.मी. उपयुक्त रहती है।

सिंचाई और खरपतवार प्रबंधन

गाजर की फसल के लिए बीज बुआई के तुरंत बाद सिंचाई करनी चाहिए। इसके बीज अंकुरण में समय लेते हैं। मृदा को तब तक नम रखें जब तक अंकुरण नहीं हो जाए। इसके बाद 7 से 15 दिनों के अंतराल पर

सिंचाई करें। ज्यादा सिंचाई भी नहीं करनी चाहिए, नहीं तो वनस्पति बढ़वार ज्यादा हो जाएगी। इसलिए आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण के लिए फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई करते रहना चाहिए। यदि खरपतवारनाशी से नियंत्रण करना चाहते हैं, तो 3 लीटर पेंडीमेथेलिन का 900 से 1000 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर बुआई के दो दिनों तक नम भूमि में छिड़काव करना चाहिए, इससे खरपतवार का जमाव ही नहीं होगा।

रोग और कीट नियंत्रण

गाजर में फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम, पीला रोग, विषाणु ब्लास्ट, रूटनॉट कृमि, आर्द्रगलन आदि रोग लगते हैं। इनकी रोकथाम के लिए रोगी पौधों को उखाड़कर मृदा में दबा देना चाहिए। बुआई से पहले 2 ग्राम बाविस्टिन या कैप्टॉन या कार्बेन्डाजिम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करना चाहिए। इसके साथ-साथ 1.5 से 2 लीटर एंडोसल्फान प्रति हैक्टर 700 से 800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। फफूंदी के नियंत्रण के लिए डाइथेन एम 45 या जेड 78 का 0.2 छिड़काव करना चाहिए।

गाजर में अर्द्धगोलाकार सूंडी, नील की सूंडी और घुन लगते हैं। इनकी रोकथाम के लिए 10 प्रतिशत बीएचसी 25 कि.ग्रा. का प्रति हैक्टर छिड़काव करना चाहिए। इसके साथ मैलाथियान 50 ई.सी. 1.5 से 2 लीटर का प्रति हैक्टर 800 से 900 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

खाद और उर्वरक

इस फसल के लिए 250 से 300 क्विंटल गोबर या कम्पोस्ट खाद दूसरी या तीसरी जुताई में डालनी चाहिए, ताकि यह अच्छी तरह से मृदा में मिल जाए। इसके साथ-साथ 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 45 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर देना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी और फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा आखिरी जुताई में देनी चाहिए। नाइट्रोजन की बची हुई मात्रा फसल बुआई के बाद, जब पत्ती और जड़ों का विकास हो रहा हो, तब आधी-आधी करके डालनी चाहिए।

गाजर की उन्नत किस्में

एशियाई किस्में

पूसा केसर: यह लाल रंग की उत्तम किस्म है। इसकी पत्तियां छोटी, जड़ें लंबी, आकर्षक लाल रंग और बीच का भाग संकरा होता है। इसकी फसल 90 से 110 दिनों में तैयार हो जाती है। उपज 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

पूसा मेघाली: यह नारंगी गूदे और कैरोटिन की अधिक मात्रा वाली किस्म है। इसकी बुआई अगेती अगस्त से सितंबर और पछेती अक्टूबर में कर सकते हैं। यह 90 से 110 दिनों में तैयार हो जाती है। उपज 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

पूसा यमदग्नि: यह प्रजाति आईएआरआई के क्षेत्रीय केन्द्र, कटराइन द्वारा विकसित की गई है। इसका रंग केसरिया और स्वाद मीठा होता है। यह फसल 90 से 120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी उपज 150 से 200 क्विंटल प्रति हैक्टर होती है।

पूसा रुधिर: यह लंबी और लाल रंग की होती है। इसकी बुआई 15 सितंबर से अक्टूबर तक होती है और यह दिसंबर में तैयार हो जाती है। इसकी उपज 280 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

यूरोपियन किस्में

नैनटिस: यह बेलनाकार और नारंगी रंग की मुलायम और मीठी गाजर होती है। खाने में स्वादिष्ट व 100 से 120 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी उपज 150 से 200 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

चेंटनी: यह मोटी और गहरे लाल-नारंगी रंग की होती है। यह 75 से 90 दिनों में तैयार हो जाती है। इसकी पैदावार 150 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

खुदाई एवं पैदावार

गाजर की जड़ों की खुदाई तब करनी चाहिए, जब वे पूरी तरह विकसित हो जाएं और इसका ऊपरी व्यास 2.5 से 3.5 सें.मी. हो जाए। खेत में खुदाई के समय पर्याप्त नमी होनी चाहिए। जड़ों की खुदाई फरवरी में करनी चाहिए। बाजार में बिक्री से पूर्व जड़ों को अच्छी तरह धो लेना चाहिए। इसकी पैदावार किस्म पर निर्भर करती है। एशियाटिक किस्में अधिक उत्पादन देती हैं। पूसा किस्म की पैदावार लगभग 200-250 क्विंटल प्रति हैक्टर जबकि नैनटिस किस्म की पैदावार 150-200 क्विंटल प्रति हैक्टर है।

बीज उत्पादन

यह क्रॉस परागण वाली फसल है। मधुमक्खी और गृहमक्खी मुख्य परागणकर्ता है। जड़ों की खुदाई न करने पर बीज उत्पादन अधिक होता है। अच्छी गुणवत्ता वाले बीज के उत्पादन करने के लिए जड़ों को खोदकर निकालते हैं और फिर उसमें से छांटकर अच्छी जड़ों को दोबारा लगा देते हैं। बीज उत्पादन 500-600 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर होता है। ■

पोषक तत्वों से भरपूर गाजर

रोकथाम

अनार में जड़गांठ सूत्रकृमि की चुनौती

अरविन्द सिंह तेतरवाल, रामनिवास, संजय कुमार और **देवीदयाल**

अनार, देश के शुष्क क्षेत्रों के लिए एक महत्वपूर्ण व उपयोगी फल वृक्ष है। आर्थिक व पौष्टिक दृष्टि से देखा जाये तो अनार, बागवानी फसलों में प्रमुख स्थान रखता है। इस फल का बाजार भाव हमेशा अच्छा रहने के साथ-साथ यह पौष्टिक गुणों से भरपूर, स्वादिष्ट, रसीला व मीठा फल है। निर्यात की दृष्टि से भी यह महत्वपूर्ण फल है। अनार की खेती शुष्क क्षेत्रों में किसानों के लिए आमदनी का अच्छा स्रोत है। देश में पिछले 4-5 वर्षों में अनार की खेती का क्षेत्रफल बढ़ा है। इसकी खेती मुख्य रूप से महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, हरियाणा तथा पंजाब में की जाती है। इस लेख में अनार को नुकसान पहुंचाने वाले सूत्रकृमि के जीवनचक्र, इसके द्वारा होने वाले नुकसान तथा लक्षणों के बारे में विस्तार से बताया गया है। इसके साथ-साथ इस जड़ ग्रंथि सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए समेकित प्रबंधन के बारे में बताया गया है। इसमें मुख्यत: पौधे लगाने से पहले गड्ढों को बनाने की तैयारी व उपचार, रोपाई के लिए पौधों का चुनाव आदि शामिल है। खड़ी फसल के दौरान सूत्रकृमि के समेकित प्रबंधन के लिए ट्रैप फसल या फंदा फसल लगाना, जैविक सूत्रकृमिनाशक फफूंद का उपयोग और वानस्पतिक व रासायनिक सूत्रकृमिनाशकों के उपयोग को समझाया गया है। इस प्रकार इन तकनीकों का इस्तेमाल करके इस सूत्रकृमि से होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।

अनार की फसल के लिए शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्र तथा 350-750 मि.मी. वर्षा उपयुक्त होती है। इसके विकास के लिए 30^0 सेल्सियस तापमान अनुकूल होता है। अधिक लंबे समय तक वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए अनार की फसल उपयुक्त नहीं होती है। ये सब बातें गुजरात के कच्छ जिले की जलवायु को अनार के उत्पादन के लिए उपयुक्त बनाती हैं। पिछले 4-5 वर्षों में यहां पर इसका क्षेत्रफल बहुत तेजी से बढ़ा है। वर्ष 2014-15 में कच्छ जिले में अनार की खेती के अंतर्गत 3,337 हैक्टर क्षेत्रफल से 46718 मीट्रिक टन उत्पादन लिया गया। कच्छ में अनार मुख्य रूप से भुज, अंजार तालुका में उगाया जाता है।

जड़गांठ सूत्रकृमि (रूट नॉट नेमेटोड) एक प्रकार का सर्वभक्षी कीट है, जो लगभग 2,000 प्रजातियों के पौधों को नुकसान पहुंचाता है। इनमें कई सारे द्विबीजपत्री फल (अमरूद, अनार, पपीता, सेब, अंगूर आदि), सब्जियां (टमाटर, बैंगन, मिर्च, फूल व पत्ता

कृषि विज्ञान केन्द्र और क्षेत्रीय अनुसंधान संस्थान केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, कुकमा, भुज-370105 (गुजरात);

गोभी, आलू आदि), दलहन फसलें, रेशे वाली फसलें, तम्बाकू, मूंगफली, चाय व कॉफी के बागान, फूल, मसाले, सजावटी पौधे और कुछ एक बीजपत्री फसलें जैसे गन्ना, ज्वार, केला, धान व कई प्रकार के खरपतवार पौधे सम्मिलित हैं। उद्यानिकी फसलों में यह सूत्रकृमि 30 से 40 प्रतिशत तक हानि पहुंचाता है। इसके अलावा यह सभी प्रकार की मृदाओं में पौधों को नुकसान पहुंचाता है, परंतु बलुई मृदा को यह ज्यादा पसन्द करता है। यह 3-10 पी-एच मान तक की मृदा में आसानी से अपना जीवनचक्र पूरा कर लेता है।

कई तरह के कीट व रोगों के अलावा अनार उत्पादन में जड़गांठ सूत्रकृमि एक प्रकार की बड़ी चुनौती बन चुका है। ये सूत्रकृमि बहुत ही सूक्ष्म और धागेनुमा आकार के होते हैं। ये मृदा में रहते हैं और सूक्ष्मदर्शी की सहायता के बिना इन्हें देखना संभव नहीं है। कच्छ क्षेत्र में बहुत से अनार के बागों में इस सूत्रकृमि का प्रकोप देखा जा सकता है। यह आने वाले समय में अनार उत्पादन में किसी चुनौती से कम नहीं होगा। यदि समय पर इसकी पहचान नहीं हो पाई तो यह बहुत तेजी से पूरे बगीचे में फैल जाता है। इसके द्वारा पौधों की जड़ों में गांठें बनाने से प्रभावित पौधे पोषक तत्व लेने में असमर्थ हो जाते हैं और धीरे-धीरे उनकी वृद्धि रुक जाती है। इस सूत्रकृमि से ग्रसित पौधों में फफूंद से होने वाले उकठा रोग का खतरा भी बढ़ जाता है।

अनार को सूत्रकृमि से बचाना है आवश्यक

भारत में मेलोइडोगाइन सूत्रकृमि की चार प्रजातियां पाई जाती हैं, जिनमें से इन्कोग्निटा प्रजाति आर्थिक रूप से नुकसान पहुंचाने की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण है। सूत्रकृमि की इस प्रजाति के परपोषी पौधों का लंबा-चौड़ा विस्तार है। यह अनार के साथ-साथ लगभग सभी फल वृक्षों को नुकसान पहुंचाती है।

नुकसान की प्रकृति

ये सूत्रकृमि पौधों की जड़ों के शीर्ष भाग पर स्थिर होकर बाह्य त्वचा में अपना नुकीला मुखांग (स्टाइलेट) अंदर डालकर जड़ों का रस चूसकर नुकसान करते हैं। जड़ों के प्रभावित भाग में सूत्रकृमि से उत्सर्जित पदार्थों की वजह से गांठें बनने लगती हैं और ये गांठें धीरे-धीरे आकार में बड़ी होती जाती हैं। जड़ों में इन गांठों की वजह से पौधे जमीन में पानी, पोषक तत्व उपस्थित रहने के बावजूद ग्रहण नहीं कर पाते हैं। इसके अलावा सूत्रकृमि से प्रभावित पौधों की जड़ों में फफूंद से होने वाले रोगों का आक्रमण बहुत जल्दी होता है। सूत्रकृमि

मेलोइडोगाइन इन्कोगनिटा का जीवन चक्र

इस सूत्रकृमि के शिशु या जुवेनाइल विकास की दूसरी अवस्था (जे-2) में पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं। ये भोजन की तलाश में मृदा में स्वतंत्र रूप से घूमते रहते हैं। पोषक पौधे की जड़ मिलने पर उनके शीर्ष भाग की बाह्य-त्वचा में अपना नुकीला मुखांग (स्टाइलेट) घुसाकर स्थिर होकर जड़ों से रस चूसते हैं एवं कुछ ऐसे पदार्थ उत्सर्जित करते हैं, जिनसे जड़ में कई कोशिकाओं का समूह मिलकर एक 'दीर्घकाय कोशिका' बनाता है। पौधों की जड़ों में गांठें बनने का कारण यह 'दीर्घकाय कोशिका' ही होती है, जो कि धीरे-धीरे आकार में बड़ी होती जाती है। इस 'दीर्घकाय कोशिका' की सहायता से सूत्रकृमि लंबे समय तक भोजन लेते रहते हैं। इस सूत्रकृमि के शिशु की दूसरी अवस्था, तीसरी व चौथी अवस्था तुरंत पार करके सफेद रंग व आकार में फूली हुई मादा सूत्रकृमि के रूप में विकसित हो जाती है। यह मादा जड़ में जेलेटिन जैसा चिपचिपे पदार्थ का गर्भाशय बनाकर 400-500 अंडे देती है। अंडों से पहली शिशु अवस्था (जुवेनाइल-1) बनती है, जो इन पारभासी अंडों के अंदर ही रहते हुए दूसरी अवस्था में बदलती है। दूसरी शिशु अवस्था पुनः भोजन की तलाश में घूमती है। इसके लिए उपयुक्त तापमान 27^0-30^0 सेल्सियस पर यह अपना जीवन चक्र 3-4 सप्ताह में पूरा कर लेता है। यह सूत्रकृमि एक वर्ष में कई पीढ़ियां पूरी करने में सक्षम है।

अनार का विभिन्न रोगों से बचाव

अनार के फल में खनिज लवण व विटामिन की प्रचुर मात्रा होने के कारण यह रोगी लोगों के लिए बहुत उपयोगी है। इसके 100 ग्राम फल में 83 कैलोरी ऊर्जा, 18.70 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 1.67 ग्राम प्रोटीन, 1.17 ग्राम वसा, 4.0 ग्राम रेशा, 13 ग्राम कुल शुगर के अलावा पोटेशियम 236 मि.ग्रा., फॉस्फोरस 36 मि.ग्रा., मैग्नीशियम 12 मि.ग्रा., कैल्शियम 10 मि.ग्रा. व विटामिन-सी, थियामिन, राइबोफ्लेविन, विटामिन बी-6, बी-12 आदि पाये जाते हैं। पौष्टिक और औषधीय महत्व देखा जाये तो अनार का फल पुरानी कहावत 'एक अनार सौ बीमार' पर खरा उतरता है। अनार के ताजा पके फलों का सेवन करने से कई तरह के रोगों जैसे उदर रोग, प्रोस्टेट कैंसर, स्तन कैंसर, निम्न रक्तचाप, हृदय रोग आदि से बचाव होता है। इसके अलावा अनार एंटीऑक्सीडेंट, एंटीइन्फ्लेमेट्री गुणों से भरपूर फल है। गर्भवती महिलाओं के लिए अनार का सेवन बहुत उपयोगी है।

जड़गांठ सूत्रकृमि से प्रभावित अनार

नगदी फसल है अनार

अर्द्धशुष्क और शुष्क जलवायु क्षेत्र अनार उत्पादन के लिए बहुत अनुकूल माने जाते हैं। यही कारण है कि पिछले 4-5 वर्षों से इस बागवानी फसल का क्षेत्रफल बहुत तेजी से निरंतर बढ़ता जा रहा है। आर्थिक दृष्टि से देखा जाये तो अनार इन क्षेत्रों के लिए महत्वपूर्ण बागवानी फसल है। इन क्षेत्रों के सीमांत से लेकर बड़े किसानों के लिए यह एक प्रमुख नगदी फसल है, जिसका बाजार भाव भी हमेशा अच्छा मिलता है। अनार के पौष्टिक गुणों के आधार पर देखा जाये तो इसमें खनिज लवणों व विटामिन की प्रचुर मात्रा होने के कारण यह बहुत उपयोगी फल है। इस फसल पर कई प्रकार के कीटों तथा रोगों का आक्रमण होता है, जिनमें जड़गांठ सूत्रकृमि अनार के उत्पादन के लिए एक चुनौती बन चुके हैं। इसके द्वारा पौधों की जड़ों में गांठें बनने से प्रभावित पौधे पोषक तत्व लेने में असमर्थ हो जाते हैं और धीरे-धीरे पौधों की वृद्धि रुक जाती है। इस सूत्रकृमि से ग्रसित पौधों में मृदाजन्य फफूंद से होने वाले उकठा रोग का खतरा भी बढ़ जाता है।

व फफूंद दोनों की उपस्थिति होने पर पौधों में रोगों का खतरा कई गुना बढ़ जाता है। अनार व अन्य फल वृक्षों में सूत्रकृमि से प्रभावित जड़ें, उकठा (विल्ट) रोग फैलाने वाली फफूंद के लिए बहुत ही संवेदनशील हो जाती हैं।

अनार में जड़गांठ सूत्रकृमि का समेकित प्रबंधन

मृदा में रहने वाला एक प्रकार का सर्वभक्षी प्रकृति का जीव होने की वजह से इस सूत्रकृमि को नियंत्रित करना थोड़ा मुश्किल है। यदि खेत में पहले से ही इसके समेकित प्रबंधन के उपाय किए जाएं तो आसानी से इसका प्रबंधन किया जा सकता है। समेकित प्रबंधन के लिए निम्नलिखित उपाय करें:

गड्ढों की तैयारी

अनार के पौधे लगाने के लिए अप्रैल-मई में लगभग 0.75 × 0.75 × 0.75 मीटर आकार के गड्ढे खोदकर खुला छोड़ना चाहिए ताकि सूर्य के ताप से जमीन में पड़ी रोगकारक फफूंद, कीट तथा सूत्रकृमि आदि की विभिन्न हानिकारक अवस्थाएं नष्ट हो सकें।

पौधे लगाने से पहले गड्ढों का उपचार

जुलाई में पौधरोपण से एक-दो सप्ताह पहले गड्ढों में 5 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद, 1 कि.ग्रा. वर्मीकम्पोस्ट, 500 ग्राम नीम की खली, 50 ग्राम स्यूडोमोनास फ्लूओरेसेन्स 1 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. जीवाणु, 50 ग्राम पेसिलोमाईसीज लिलेसिनस 1 प्रतिशत डब्ल्यू.पी., 50 ग्राम ट्राईकोडर्मा हर्जेनियम 1 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. फफूंद प्रति गड्ढे के हिसाब से डालें।

रोपाई के लिए पौधों का चुनाव

अनार के पौधरोपण के लिए पौधे किसी प्रमाणित नर्सरी से ही लेने चाहिए। पहले से यह सुनिश्चित हो कि इन पौधों में किसी प्रकार के रोग तथा सूत्रकृमि का संक्रमण नहीं है, नर्सरी में से संक्रमित पौधों को उखाड़ देना चाहिए ताकि स्वस्थ पौधों को संक्रमण से बचाया जा सके और संक्रमण को खेत तक जाने से रोका जा सके।

खड़ी फसल में समेकित प्रबंधन

यदि उपरोक्त उपचार करने के बाद भी अनार के पौधों में जड़गांठ सूत्रकृमि का आक्रमण होता है तो निम्नलिखित उपाय करने चाहिए:

ट्रैप फसल या फंदा फसल लगाना

अनार के पौधों को मेलोइडोगाइन से बचाने के लिए पौधों के चारों ओर अथवा अंत: सस्य फसल के रूप में अफ्रीकन गेंदा, टेजेट्स स्पी. के पौधे लगाने चाहिए। अफ्रीकन गेंदे की जड़ों से स्रावित रसायन जैसे अल्फा-टर्थिनिएल इस सूत्रकृमि को आकर्षित करके अपने जहरीलेपन से इनकी संख्या को कम करने में सहायक होता है।

जैविक सूत्रकृमिनाशक फफूंद का उपयोग

अनार की खड़ी फसल में इस सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए 3-4 महीने के अंतराल पर जैविक फफूंद (पेसिलोमाईसीज लिलेसिनस, पोकोनिया क्लेमाईडोस्पोरा, ट्राईकोडर्मा हर्जेनियम) से समृद्ध 3 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट प्रति पौधे की दर से जड़ों के पास मृदा में डालें। इसके अलावा उपरोक्त जैविक फफूंद से समृद्ध 20 कि.ग्रा. नीम खली को 200 लीटर पानी में डालकर 48 घंटों के लिए रखने के बाद इस मिश्रण से 2-3 लीटर प्रति पौधे की दर से सराबोर (ड्रेंचिंग) करें। उपरोक्त मिश्रण को छानकर टपक (ड्रिप) सिंचाई के साथ भी पौधों में दे सकते हैं।

वानस्पतिक व रासायनिक सूत्रकृमिनाशकों का उपयोग

अनार के पौधों में जड़ग्रंथि सूत्रकृमि का आक्रमण होने पर वानस्पतिक रसायन जैसे अजाडिरेक्टिन 0.15 प्रतिशत घोल से या रासायनिक सूत्रकृमिनाशक जैसे कार्बोफ्यूरॉन 3 जी या फेनामिफोस 5 जी आदि की 40 ग्राम मात्रा प्रति पौधे की दर से मृदा को सराबोर करें।

बगीचे के चारों ओर साफ-सफाई बनाये रखें। अनार के साथ टमाटर, मिर्च, बैंगन तथा भिण्डी आदि सब्जियों की अंत:सस्य फसल नहीं लेनी चाहिए, क्योंकि ये सूत्रकृमि की संख्या को बढ़ावा देती हैं।

पौधों में जड़गांठ सूत्रकृमि के लक्षण

- गांठें बनने से पौधों का जड़ तंत्र खराब हो जाता है। प्रभावित पौधों में पोषक तत्वों की कमी होने पर पौधों का चयापचयी तंत्र खराब होने से पौधों की वृद्धि रुक जाती है।
- मुख्य जड़ के साथ-साथ पोषण प्रदान करने वाली सहायक जड़ों में छोटे आकार की गांठें देखने को मिलती हैं।
- प्रभावित पौधे आकार में बौने रहने के साथ-साथ फलों का आकार भी छोटा हो जाता है, जिससे उपज कम हो जाती है।
- पौधों की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और कुछ समय बाद पौधों में पानी की कमी के कारण पत्तियां झड़ने लगती हैं।

आम के बागों का एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन

मेघा विभुते, अजीत सिंह और **कार्तिकेय सिंह**
कृषि विज्ञान केन्द्र, बुरहानपुर (मध्य प्रदेश)

आम, हमारे देश का एक प्रमुख मनपंसद फल है। यह खाने में काफी स्वादिष्ट तथा विटामिन 'ए' और 'सी' से भरपूर होता है। यह एंटीऑक्सीडेंट का कार्य करता है। आम के सेवन से विटामिन 'ए' की कमी से होने वाले रोगों जैसे रात का अंधापन आदि से बचा जा सकता है। भारत, विश्व में आम का सबसे अधिक उत्पादन करने वाला देश है, परंतु इसकी उत्पादकता कम है। कम उत्पादकता के कई कारण हैं, जिनमें पोषक तत्वों का असंतुलित प्रयोग, फल विकास की अवस्था में सिंचाई सुविधाओं का अभाव, अनियमित फलन, उन्नत सस्य क्रियाओं का सीमित प्रयोग, केनॉपी प्रबंधन का अभाव, कीटों एवं रोगों का प्रकोप आदि प्रमुख हैं। उपरोक्त सभी कारकों में कीटों एवं रोगों का प्रकोप भी एक प्रमुख कारण है। आम में अनेक प्रकार के कीट-व्याधि तथा विभिन्न प्रकार के विकार पाये जाते हैं, जिनका समय पर निदान अत्यंत आवश्यक है।

भारत में कृषि उत्पादकता बढ़ाने, किसानों की आर्थिक स्थिति उन्नत करने तथा कृषि आधारित अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने में बागवानी का विशेष महत्व है। यही कारण है कि देश में विगत दशकों में बागवानी फसलों के क्षेत्रफल और उत्पादन में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। देश में आम की उपज उत्तर प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश एवं बिहार में प्रमुखता से होती है। वर्ष 2016-17 की सांख्यिकी के अनुसार देश में 2,263 हजार हैक्टर में आम उगाया जाता है, जिससे 19,687 हजार टन उत्पादन प्राप्त हुआ। देश में आम की राष्ट्रीय उत्पादकता 8.7 टन प्रति हैक्टर है।

आम उद्यानों में कीटों एवं व्याधियों के नियंत्रण के लिए किसानों द्वारा मुख्य रूप से जहरीले रसायनों का अविवेकपूर्ण प्रयोग किया जा रहा है। इससे अनेक प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हो रही हैं। इन समस्याओं में गौण कीटों का प्रमुख नाशक कीटों में परिवर्तन, कीटों में कीटनाशकों की बढ़ती प्रतिरोधकता, पर्यावरण और खाद्य श्रृंखला का प्रदूषण, उद्यान में उपस्थित प्राकृतिक शत्रु कीटों का विनाश तथा फलों के निर्यात में अवरोध इत्यादि प्रमुख हैं। इन नाशीजीवी रसायनों द्वारा फलों के प्रदूषित होने की आशंका अपेक्षाकृत अधिक रहती है। ये तुड़ाई के तुरंत बाद उपयोग में लाये जाते हैं। इन्हीं में से कुछ कीट-व्याधियों और विकारों का वर्णन निम्नानुसार हैं:

प्रमुख कीट

फल मक्खी

फल मक्खी (वैक्टोसेरा डारर्सेलिम) फ्रूट फ्लाई के प्रकोप से फलों को भारी क्षति होती है। यह कीट देर से पकने वाले फलों में अधिक लगता है। सूंडी पके हुए फलों के गूदे को खाकर एक सड़े बदबूदार पदार्थ के रूप में परिवर्तित कर देती है, जिससे फल सड़कर नष्ट हो जाता है। वयस्क मक्खियां अप्रैल-मई में जमीन से निकलना प्रारंभ करती हैं। एक मक्खी औसतन 150-200 तक अंडे देती है। वयस्क मक्खियां पीले भूरे रंग की होती हैं।

फल मक्खी

प्रबंधन

- आम के उद्यानों की निराई-गुड़ाई अक्टूबर से फरवरी में करें, ताकि जो प्यूपा, सुषुप्तावस्था में हैं वे नष्ट हो सकें।
- रोकथाम के लिए मिथाइलयूजिनाल ट्रैप का प्रयोग करें।
- इस कीट के प्रबंधन में लकड़ी की प्लाई का ब्लॉक भी बहुत उपयोगी है। एक जार में इथाइल एल्कोहल, मिथाइल यूजेनाल और मैलाथियान 6:4:1 के अनुपात में घोलें। 48 घंटे तक डुबोकर मई के प्रथम सप्ताह में पेड़ पर ट्रैप के माध्यम से लगाएं। इसकी प्रभावशीलता 2.5 से 3 माह तक बनी रहती है।

गुझिया रोग

गुझिया कीट आम का एक प्रमुख कीट है। मादा (मिलीबग) अप्रैल-मई में पेड़ों से नीचे उतरकर भूमि की दरारों में प्रवेश कर अंडे देती है। अंडे भूमि में नवंबर-दिसंबर तक सुषुप्तावस्था में रहते हैं। दिसंबर के अंतिम सप्ताह में शिशु कीट अवयस्क अंडों से निकलकर पेड़ों पर चढ़ना प्रारंभ कर देते हैं। वयस्क कीट जनवरी से मई तक बौर एवं कोमल भागों से रस चूसकर उनको सुखा देते हैं।

प्रभावित आम

प्रबंधन

- कीट प्रबंधन के लिए खरपतवार की गुड़ाई करके नवंबर में बागों से निकाल देने से अंडे नष्ट हो जाते हैं।
- दिसंबर में बाग की जुताई करके वृक्ष के तने के आसपास क्लोरोपाइरीफॉस (1.5 प्रतिशत) 250 ग्राम प्रति वृक्ष की दर से मृदा में मिला देने से अंडे से निकलने वाले अवयस्क मर जाते हैं।
- पॉलीथीन की 20 सें.मी. पट्टी पेड़ के तने के चारों ओर भूमि की सतह से 50 सें.मी. ऊंचाई पर दिसंबर के चौथे सप्ताह में कीट के निकलने से पहले लपेटने से उनको वृक्षों पर ऊपर चढ़ने से रोका जा सकता है।
- इस कीट के वयस्कों के प्रबंधन के लिए मोनोक्रोटोफॉस (5 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) या डायमेथोएट (1.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।

प्रमुख रोग

श्यामव्रण या एंथ्रेक्नोज

नई पत्तियों तथा बौर पर इस रोग का प्रभाव पड़ता है। फलों की भंडारण अवधि में भी इस रोग का प्रभाव पड़ता है। पत्तियों पर भूरे या काले, गोल या अनिश्चित आकार के धब्बे पाये जाते हैं। परिणामस्वरूप पत्तियों की सामान्य वृद्धि रुक जाती है। कच्चे फलों पर काले धब्बे बन जाते हैं। धब्बे (दाग) के नीचे का गूदा सख्त होकर फट जाता है और अंत में फल गिर जाते हैं।

प्रबंधन

- रोगी टहनियों की छंटाई कर उन्हें गिरी हुई पत्तियों के साथ जला देना चाहिए।
- छंटाई के बाद पेड़ पर कवकनाशी रसायनों जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम लीटर) पानी का छिड़काव जनवरी से जून-जुलाई तक करना चाहिए।

श्यामव्रण रोग

भुनगा कीट

इसे आम का फड़का या भुनगा कीट (मैंगो हॉपर) कहा जाता है। यह एक विनाशकारी कीट है। इस कीट का वैज्ञानिक नाम अमरीटोइस एटकिनसोनाई है। इसके प्रौढ़ तथा वयस्क दोनों ही आम के मुलायम प्ररोहों, पत्तियों तथा फूलों का रस चूसते हैं। यह कीट साल भर आम में अपना जीवन निर्वाह करता है। फरवरी में इसका प्रकोप आरंभ हो जाता है। साधारण प्रकोप से भी आम को 30-60 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है। इसके प्रकोप से बौर से फल नहीं बनते हैं और यदि फल बन भी जाते हैं, तो जल्दी गिर जाते हैं। यह कीट बहुत अधिक मात्रा में मधुरस छोड़ता है और एक काली फफूंदी के रूप में विकसित हो जाता है। यह पेड़ों की पत्तियों और प्ररोहों पर लग जाता है। यह कीट पुराने और घने पेड़ों पर अधिक लगता है।

प्रबंधन

- प्रबंधन के लिए पुराने पेड़ यदि अधिक घने हो गए हों तो कुछ नई टहनियों को काट देना चाहिए।
- उद्यानों की समय पर जुताई और निराई-गुड़ाई करनी चाहिए, ताकि कीट का प्रकोप कम हो सके।
- उचित दूरी पर पौध रोपण करें।
- प्रतिवर्ष कटाई-छंटाई करें, ताकि सूर्य का प्रकाश पेड़ों की शाखाओं को मिल सके।
- इस कीट के नियंत्रण के लिए आम में बौर लगते समय इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल (1 मि.ली./लीटर) का पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। पहला छिड़काव 5 प्रतिशत आम में बौर आने की अवस्था में तथा दूसरा छिड़काव दो से तीन सप्ताह बाद करें। बौरों के पूर्ण रूप से खिलने के बाद छिड़काव न करें।

पाउडरी मिल्ड्यू

पाउडरी मिल्ड्यू

यह आम का प्रमुख रोग है। इसका प्रकोप संपूर्ण भारत में बौर आने की अवस्था और फल बनते समय होता है। इसके प्रकोप से कोमल शाखाओं तथा नये फलों पर सफेद पाउडर विकसित हो जाता है। इस कारण बौर से फल नहीं बनता तथा जो फल बने होते हैं, वे जमीन पर गिर जाते हैं। उद्यानों में इसके प्रकोप से 40-45 प्रतिशत तक नुकसान देखा गया है।

प्रबंधन

- अत्याधिक रोगग्रसित पत्तियों की कटाई-छंटाई करने से रोग का प्रकोप कम होता है।
- बौर आते समय उद्यान की निरंतर निगरानी करते रहना चाहिए तथा इसके बाद फफूंदीनाशक का प्रयोग लाभकरी सिद्ध होता है।
- घुलनशील सल्फर (80 डब्ल्यू.पी.) 0.2 प्रतिशत (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर) का छिड़काव लाभकारी होता है। इसका पहला छिड़काव फूल खिलने से ठीक पहले (जब 5-10 प्रतिशत तक फूल खिले हों) करना चाहिए।
- दूसरा छिड़काव हेक्जाकोनाजोल 1 ग्राम प्रति 2 लीटर पानी में घोल बनाकर करें।

झुलसा रोग

झुलसा रोग

बौर आने के समय झुलसा रोग का प्रकोप प्रारंभ होने लगता है। इससे बौरों एवं अविकसित फलों के झड़ने की स्थिति प्रारंभ हो जाती है। इस रोग का प्रकोप नमी में बढ़ोतरी होने से होता है।

प्रबंधन

- प्रभावित पत्तियां एवं फलों को इकट्ठा करके जला दें एवं बाग को साफ-सुथरा रखें।
- रोग नियंत्रण के लिए मेन्कोजेब (63 प्रतिशत)+कार्बेन्डाजिम (12 प्रतिशत) का 0.2 प्रतिशत (2 ग्राम) प्रति लीटर पानी का छिड़काव करना चाहिए।

गुच्छा रोग

अभी तक इस रोग के कारणों का पता नहीं चल सका है, फिर भी माइट्स नामक कीट तथा हार्मोन का असंतुलन इसका मुख्य कारण माना जा रहा है। इस रोग का मुख्य लक्षण यह है कि इसमें पूरा बौर नपुसंक फूलों का एक ठोस गुच्छा बन जाता है। इससे पत्तियों तथा फूलों की वृद्धि रुक जाती है और वे आकार में छोटे रह जाते हैं।

प्रबंधन

- प्रबंधन के लिए कम प्रकोप वाले बागों में जनवरी-फरवरी में बौर तोड़कर जला दें।
- कटे हुये भाग पर चौबटिया मिश्रण, जो सिंदूर और अलसी के तेल से बनाया जाता है, का लेप लगा दें। बौर तोड़ने से उपज में वृद्धि होती है और रोग आगे फैलने की आशंका भी कम हो जाती है।
- अधिक प्रकोप वाले बागों में एन.ए.ए. हार्मोन 4.5 मि.ली./लीटर पानी में घोल बनाकर अक्टूबर में छिड़काव करें।

अन्य कारणों से होने वाले विकार

आम की बागवानी में होने वाले विभिन्न प्रकार के विकार मौसम की बेरुखी और 'फिजियोलाजिकल डिस्आर्डर से होते हैं। इन्हें विकार रोग भी कहते हैं। इसमें से 'मालफॉर्मेशन' या गुम्मा रोग, कोइलिया, क्षयरोग 'फ्रूट-ड्रॉपिंग' या फलों का गिरना,

गमोसिस

अल्टरनेट बियरिंग अथवा एकांतरिक फलन की समस्या आती है। इनमें से गुच्छा रोग तथा गमोसिस बहुत हानिकारक है, जिनका विवरण निम्नानुसार है।

गमोसिस

देसी आम के बागों में जीर्णोद्धार के पश्चात इस रोग का प्रकोप अधिक पाया गया है। कलमी आमों में लंगड़ा किस्म इस रोग के प्रति अधिक संवेदनशील है। यह रोग एक प्रकार की फफूंदी से होता है, जिससे वर्षा के बाद सर्दियों में आम के मुख्य तने, शाखायें और छाल तक में दरारें फूट जाती हैं और गोंद जैसी बूंदें रिसने लगती हैं।

प्रबंधन

- रोगग्रसित छाल या हिस्से को हटा कर सफाई के बाद बोर्डो लेप या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड लेप लगाना चाहिए।
- इसके प्रबंधन के लिए देसी गाय के गोबर को पानी में घोलकर गाढ़ा लेप बना लेना चाहिए। उसमें थोड़ी-सी अलसी का तेल मिला लें। इसे वर्ष में तीन बार प्रयोग करने से गमोसिस रोग का काफी हद तक प्रबंधन किया जा सकता है।
- आधुनिक परीक्षणों में यह पाया गया है कि यह लेप आजकल प्रचलित रासायनिक दवाइयों की तुलना में अधिक प्रभावी है। गाय के गोबर में अनेक सूक्ष्मजीव प्रमुखत: एक्टिनोमाइसिटीज जैसे निसंक्रमित करने वाले जीवाणु होते हैं, जो गमोसिस के कारकों को बखूबी रोकते हैं। इसलिए आम की कीट-व्याधियों की रोकथाम के लिए अधिक से अधिक जैविक कीटनाशी का उपयोग करना चाहिए।
- कॉपर सल्फेट को 500 ग्राम प्रति वृक्ष की दर से पेड़ की उम्र की दर से जड़ के चारों तरफ डालना उपयोगी होता है।
- बोर्डो मिक्स्चर (1 प्रतिशत) एवं मेन्कोजेब (64 प्रतिशत) + मेटालेक्जिल (4 प्रतिशत) 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से मृदा ड्रेन्चिंग करें।

आम उद्यान में एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन

- आम की फसल में फरवरी में बौर आना खिलना प्रारंभ होता है। अत: इस अवधि में उद्यान की 2-3 दिनों के अंतराल पर निगरानी करते रहें तथा भुनगा कीट और पाउडरी मिल्ड्यू का प्रकोप होने की आशंका में संस्तुत रसायनों का विवेकपूर्ण प्रयोग करें। उपरोक्त कीट और व्याधि का प्रकोप फूल खिलते समय प्रारंभ होता है अत: फूल खिलते समय (जब लगभग 5 से 10 प्रतिशत फूल खिले हों) इन रसायनों का प्रयोग एक साथ आवश्यकतानुसार किया जा सकता है।
- संस्तुत रसायनों का दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 15-20 दिनों बाद प्रकोप होने की अवस्था में किया जा सकता है। यह ध्यान दें कि एक ही रसायन का दोबारा प्रयोग न करें। ऐसा करने से आम उद्यान में भुनगा कीट और पाउडरी मिल्ड्यू का पूर्ण रूप से नियंत्रण हो जाता है।
- मार्च-अप्रैल में (जब फल मटर के दाने के बराबर हो जायें) संस्तुत उर्वरकों की आधी मात्रा का प्रयोग पेड़ के मुख्य तने के चारों तरफ रिंग बनाकर करें।
- मई में फल विकास की अवस्था रहती है। अत: इस अवधि में सूक्ष्म पोषक तत्वों का 15-20 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करें। ऐसा करने से यह देखा गया है कि फल का विकास उचित ढंग से होता है तथा फल में गूदे की मात्रा अधिक होती है।
- मई से फल मक्खी का प्रकोप प्रारंभ होता है। अत: इस माह में उल्लेख किए गए लकड़ी की प्लाई का बॉक्स अथवा ईको ट्रैप तथा एक लीटर पानी में 100 ग्राम गुड़ + 2 मि.ली. कार्बेरिल का घोल तैयार कर स्पॉट एप्लीकेशन करें। फल मक्खी के नियंत्रण के लिए समन्वित नियंत्रण उपायों को अपनाकर इस कीट का प्रबंधन किया जा सकता है।
- जुलाई के अंत में या अगस्त में (फल तुड़ाई के बाद) शेष संस्तुत उर्वरकों की आधी मात्रा का प्रयोग मुख्य तने के चारों तरफ रिंग बनाकर करें। इसके साथ ही सड़ी गोबर की खाद 60-70 कि.ग्रा प्रति पेड़ की दर से भी प्रयोग करें। ऐसा करने से पेड़ के विकास के साथ साथ नई शाखायें विकसित होती हैं, जो अंतत: अच्छी पैदावार देने में सहायक सिद्ध होती हैं।
- अगस्त में शूटगॉल कीट का प्रकोप होता है। अत: जुलाई के अंत में संस्तुत कीटनाशक का पहला छिड़काव तथा दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 15-20 दिनों बाद अवश्य करें।
- अक्टूबर में उद्यान की जुताई, निराई-गुड़ाई कर सफाई रखें तथा थावलों का निर्माण करें। इस समय गुम्मा रोग से ग्रसित गुच्छों को काटकर नष्ट कर दें। फूल खिलते समय भी उद्यान की निरंतर निगरानी करते रहें तथा गुम्मा रोग से प्रभावित गुच्छों को काटकर उद्यान से अलग कर दें। ■

शूटगॉल

यह कीट उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, उत्तरी बिहार और पश्चिम बंगाल के तराई वाले इलाकों के लिए एक गंभीर समस्या है। शिशुकीटों द्वारा पत्तियों की कलिकाओं से रस चूसने के फलस्वरूप, उनका पत्तियों के रूप में विकास नहीं हो पाता, बल्कि ये शंखाकर (नुकीले) होकर अंत में सूख जाती हैं। नुकीली गांठों के बनने के फलस्वरूप इसमें फूल नहीं आते हैं।

प्रबंधन

- आम के उद्यानों की निराई-गुड़ाई करें।
- इस कीट के प्रबंधन के लिए मोनोक्रोटोफॉस (5 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) या क्विनालफॉस (5 मि.ली. प्रति 10 लीटर पानी) का 15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

शतावर की खेती से भरपूर आय

परमेश्वर लाल सारण[1], हेतल क्रिस्चियन[1], रिद्धि पटेल[1] और **गंगा देवी[2]**

वर्तमान समय में उचित औषधीय और सगंधीय पौधों के माध्यम से खेती योग्य भूमि का प्रभावी उपयोग किया जा सकता है। औषधीय जड़ी-बूटियों को नगदी फसल की खेती के रूप में माना जाता है। गुजरात में किसानों की आजीविका और आमदनी के स्थायित्व के लिए शतावर एक महत्वपूर्ण विकल्प है। प्रत्यारोपण के 30 महीनों के बाद शतावर की कुल 18.06 टन प्रति हैक्टर ताजा जड़ों की खुदाई की गई। औसतन, किसानों को शुद्ध लाभ पर 3.75 बी:सी अनुपात तथा 3,35,060 रुपये प्रति हैक्टर प्रति वर्ष शुद्ध लाभ मिल सकता है। परिणामों से स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि शतावर जैसे औषधीय पौधे को मौजूदा कृषि प्रणालियों में लाया जा सकता है। इस प्रकार किसानों की आय बढ़ाने के लिए इसे महत्वपूर्ण विकल्प कहा जा सकता है।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के लिए विकासशील देशों में हर्बल दवाएं बड़ी मांग में हैं। वे न केवल सस्ती हैं, बल्कि उनकी बेहतर सांस्कृतिक स्वीकार्यता, मानव शरीर के साथ बेहतर संगतता और न्यूनतम दुष्प्रभाव के लिए भी उचित मानी जाती है।

शतावर (फैमिली: एस्पैरागेसी) पारंपरिक तौर पर एक महत्वपूर्ण औषधीय पौध है। शतावर उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों, विशेष रूप से मध्य भारत में आमतौर पर पाया जाता है। यह उपोष्णकटिबंधीय हिमालय में 1500 मीटर की ऊंचाई तक भी पाया जाता है। यह सूखी भूमि का पौधा है और उपोष्णकटिबंधीय, अर्द्धशुष्क और ठंडे वातावरण के लिए पसंद किया जाता है। शतावर कंद जड़ों के साथ साथ एक लता, बहुशाखीय, शूलीय, छोटी झाड़ी है। इसकी जड़ें गुच्छादार, मांसल, धुरी आकार, हल्के राख रंग बाहरी और सफेद आंतरिक रूप से, ताजा होने पर थोड़ी-बहुत चिकनी होती हैं, लेकिन सूखने पर झुर्रियां विकसित होती हैं। इनमें किसी भी तरह की गंध की कमी होती है। शाखाएं कांटों मे रूपांतरित हो जाती हैं।

औषधीय गुण

यह एक शक्तिवर्द्धक औषधि है। जड़ें दस्त विरोधी, मूत्रवर्द्धक, पोषक, शक्तिवर्द्धक, कामोद्दीपक, क्षुधावर्द्धक और परिवर्तनशील होती हैं।

पीली शतावर की खेती

[1]भाकृअनुप-औषधीय और सगंधीय पादप अनुसंधान निदेशालय, बोरियावी-387310, आणंद (गुजरात); [2]आणंद कृषि महाविद्यालय, आणंद-388110 (गुजरात)

सारणी 1. 30 महीने के दौरान 2.5 हैक्टर में पीली शतावर की खेती में लागत और लाभ

कारक	मूल्य (रुपये)
भूमि की तैयारी	15,986
रोपण सामग्री (5 किलो/2.5 हैक्टर)	30,000
प्रत्यारोपण	7,915
खाद	15,600
सिंचाई (टपक)	15,508
खरपतवार और सुखाना	29,200
जडों की कटाई और सुखाई	34,680
पारिवारिक श्रम	21,750
कार्यशील पूंजी पर ब्याज	11,991
विविध लागत	14,054
परिवर्तनीय लागत (1 से 10 तक)	1,96,684
विमूल्यन	10,800
अपनी भूमि का किराया (30 महीने)	14,000
निश्चित पूंजी पर ब्याज (मौजूदा बैंक दर)	1,665
कुल निश्चित लागत(11+12+13)	26,465
ताजा जड़ उपज (टन/2.5 हैक्टर)	45.15
सूखी जड़ उपज (टन/2.5 हैक्टर)	4.42

सारणी 2. गुजरात में पीली शतावर की खेती की आर्थिकी

विवरण	मूल्य (रुपये)
कुल लाभ/हैक्टर (पाउडर/6 लाख रुपये/टन)	4,24,320
कुल लागत (हैक्टर रुपये)	89,260
शुद्ध लाभ (हैक्टर रुपये)	3,35,060
शुद्ध लाभ पर बी:सी अनुपात	3.75

शतावर से कमाई

शतावर के गुणों को ध्यान में रखते हुए निदेशालय द्वारा किसानों के क्षेत्र (> 1 हैक्टर) में शतावर की खेती के प्रदर्शन दिए गए। शतावर, जंगली जानवर, कीट और रोगों के हमले के मामले में कम जोखिम भरा है। यहां तक कि यह सीमांत भूमि में भी उगाई जाती है। इसलिए इस फसल को इस क्षेत्र में पारंपरिक रूप से उगाई जाने वाली फसलों की वैकल्पिक फसल के रूप में चुना गया था।

प्रशिक्षण एवं परीक्षण गतिविधियों के माध्यम से निदेशालय द्वारा श्री विपुलभाई रणछोड़भाई हरियाणी को पीली शतावर की खेती की लाभप्रदता के बारे में आश्वस्त किया गया था। इन्होंने सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली का उपयोग करके इस फसल को लगाने का फैसला किया। पीली शतावर की अच्छी बाजार दर तथा बेहतर उपज देने के कारण इसको खेती के लिये चुना गया है। यह गुजरात के भावनगर जिले की एक कहानी है, जो एक शतावर की सफलतापूर्वक खेती करने वाले किसान के रूप में उभरा है। भद्रावाड़ी, बोटाद गांव में इस फसल की खेती श्री विपुलभाई आर. हरियाणी द्वारा दस बीघा के खेत से शुरू की गई। यह कार्य भाकृअनुप-औषधीय और सुगंधित पादप अनुसंधान निदेशालय, बोरियावी के वैज्ञानिकों से परामर्श लेकर किया गया। एकमात्र फसल के रूप में पीली शतावर की खेती ने किसानों की आमदनी को दोगुना करने के लिए एक उत्कृष्ट उदाहरण स्थापित किया। खेती के 2.5 वर्षों के बाद, श्री विपुलभाई द्वारा एकमात्र फसल में लाभ की अच्छी कमाई की।

शतावर की प्रति हैक्टर खेती की कुल लागत 2,23,149 रुपये थी। औसतन इस किसान को एक मुख्य फसल से 18.06 टन प्रति हैक्टर प्रति 30 महीने ताजा जड़ें मिलीं। शुष्क जड़ों के पाउडर विपणन से शुद्ध लाभ 3,35,060 रुपये प्रति हैक्टर प्रति वर्ष तथा शुद्ध लाभ एवं लागत अनुपात 3.75 था।

खुदाई प्रत्यारोपण के 30 महीने बाद की गई थी। मुख्य फसल की पैदावार 45.15 टन/2.5 हैक्टर थी। पीली शतावर को व्यावसायिक रूप से किसानों की आमदनी को दोगुना करने के लिए संभावित स्रोत के रूप में खेती के लिये उपयुक्त पाया गया है।

इसके अलावा, पौधे को थोड़ा मीठा माना जाता है। यह रक्त, गुर्दे, यकृत, मस्तिष्क, सन्धिवात, गले और गोनोरिया के रोगों में उपयोगी होता है। यह एक विशेष मादा शक्तिवर्द्धक है। यह सभी उम्र समूहों की महिलाओं को जीवन के प्राकृतिक चरणों के माध्यम से बहुत सावधानीपूर्वक पार करने में मदद करता है। मासिक धर्म के दौरान इसकी जड़ें बहुत उपयोगी होती हैं। यह पेट के तनाव और मरोड़ में राहत देती है। यह गर्भाशय को मजबूत करता है। स्तनपान के दौरान दूध के उत्पादन को बढ़ाता है। यह रजोनिवृत्ति के दौरान महिलाओं की मदद करता है। इसके अलावा, शतावार की जड़ें मधुमेह मेलिटस, उच्च कोलेस्ट्रॉल और ट्राइग्लिसराइड के स्तर, कैंसर, जीवाणु और कवक संक्रमण, त्वचा शोथ, बांझपन और उदासीनता के उपचार एवं नियंत्रण में बहुत उपयोगी साबित हुई हैं। औषधीय उद्योगों में इसकी उच्च मांग रहती है।

इस अध्ययन में इस फसल को बेहतर बाजार की मांग, बाजार विक्रय दर एवं उत्पादक क्षमता को देखते हुए एकल फसल प्रणाली के लिए उपयुक्त पाया गया है। अन्य पारम्परिक फसलों की तरह इसकी सुनियोजित बाजार व्यवस्था नहीं होने के कारण विपणन से जुड़ी हुई समस्या रहती है। इस के बावजूद किसान को शतावर की खेती करने से लगभग शुद्ध लाभ 3,35,060 रुपये प्रति हैक्टर प्रति वर्ष मिलता है। ■

ताजा जड़ें

सूखी जड़ें

आलू के गुणवत्तापूर्ण बीजों का महत्व

सुगनी देवी[1], मो. अब्बास शाह[1], रत्ना प्रीति कौर[1] और **आर.के. सिंह[2]**

गुणवत्तापूर्ण बीज, सफल आलू की खेती में सबसे महत्वपूर्ण कारकों में से एक है। अच्छी गुणवत्ता वाले बीज की कमी को दुनिया भर में आलू के उत्पादन में सबसे महत्वपूर्ण अवरोधक कारक माना जाता है। जैविक गुणवत्ता में रोग संक्रमण का स्तर और बीज कंदों की आयु शामिल है। बीज कंद कई वर्षों तक लगातार लगाए जाते हैं, जिससे अपघटन होता है। अपघटन कई प्रकार के वायरस और संबंधित जैसी जीवों से उत्पन्न होता है। व्यावसायिक गुणवत्ता को कंद के आकार और एकरूपता के साथ ही बाह्य उपस्थिति द्वारा परिभाषित किया जाता है। सामान्य उत्पादन के लिए, बीज कंद या ट्यूबर के टुकड़ों का उचित आकार लगभग 40 से 50 ग्राम होना चाहिए। प्रमाणित बीज के साथ हर 3 वर्ष में बीज को प्रतिस्थापित करना बेहतर होता है। मैदानों में 'सीड प्लॉट तकनीक' के माध्यम से उत्पादित बीज न केवल 30-40 प्रतिशत उच्च उपज देता है बल्कि कई मृदा और कंदीय रोगों और कीटों से भी मुक्त होता है। फसल बुआई के पश्चात कम से कम 75 दिनों तक का समय एफिड या विषाणुवाहक कीटों से मुक्त अथवा कम एफिड/कीट संख्या वाला होना चाहिए। भारत, जापान के अलावा एशिया का एकमात्र देश है, जिसका अच्छी तरह से स्थापित एक बीज उत्पादन कार्यक्रम है। वर्तमान में भाकृअनुप-केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला या सीपीआरआई सालाना 3000 टन मूल बीज पैदा करता है। हाल ही में सीपीआरआई ने बायोटेक्नोलॉजी और एयरोपोनिक्स जैसे उच्च तकनीक विधियों का उपयोग करके बीज आलू के स्वस्थ मातृ स्टॉक के उत्पादन पर बहुत अधिक जोर दिया है।

चावल, गेहूं और मक्का के बाद भारत में 'सब्जियों का राजा' के रूप में जाना जाने वाला आलू (*सोलेनम ट्यूबरोसम* एल) देश में चौथी सबसे महत्वपूर्ण खाद्य फसल के रूप में उभरा है। खासकर विकासशील देशों में, पौष्टिक मूल्य के संदर्भ में, विविध वातावरण की अनुकूलता और उपज क्षमता के कारण आलू एक पसंदीदा फसल है। उत्पादन के अनुसार भारत पिछले बीस वर्षों से हमेशा शीर्ष दस देशों में रहा है। वर्ष 2016 के दौरान भारत में आलू उत्पादन 2.13 मिलियन हैक्टर क्षेत्र से 43.77 मिलियन टन था, जिसकी 20.55 टन/हैक्टर (एफएओएकटीएटी) की उत्पादकता थी। उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, बिहार और पंजाब में भारत के लगभग 86 प्रतिशत उत्पादन आलू का हिस्सा है।

भारत में उत्पादकता स्तर औसतन 20 टन/हैक्टर है, जो दुनिया के औसत स्तर से कम (लगभग 29 टन/हैक्टर) है। यह माना जाना चाहिए कि भारत अपने आलू को लघु दिन की स्थितियों के तहत उगाता है। इससे लघु फसल चक्र की वजह से कम उपज होती है, जबकि समशीतोष्ण (लंबा दिन) स्थितियों के तहत उगाई जाने वाली फसल की अवधि लंबी होती है।

गुणवत्ता वाले बीज की छोटे और सीमांत किसानों के लिए अनुपलब्धता के कारण भी विकसित देशों की तुलना में भारत में आलू उत्पादकता कम है। किसानों के बीज की तुलना में अच्छी गुणवत्ता वाले बीज के उपयोग से औसत उपज 30 से 50 प्रतिशत है। वर्तमान में सीपीआरआई देश में गुणवत्ता वाले आलू की रोपण सामग्री की आपूर्ति को सुविधाजनक बनाने के लिए लगभग 25 व्यावसायिक किस्मों के लगभग 30,000 क्विंटल न्यूक्लियस और ब्रीडर बीज का उत्पादन करता है, जो कि देश में स्वस्थ बीज आलू की मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त है। एफएओएकटीएटी के अनुसार, भारत ने वर्ष 2010 तक (ट्रायनेमियम के अंत) बीज के रूप में 2.96 मिलियन टन आलू कंद (राष्ट्रीय आलू उत्पादन का 8.5 प्रतिशत) बीज का उपयोग किया।

बीज के रूप में उपयोग किए जाने वाले आलू की पूर्ण मात्रा वर्ष 2050 के

[1]केंद्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, जालंधर (पंजाब); [2]भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश)

कुफरी बादशाह

दौरान 6.1 मिलियन टन तक बढ़ने का अनुमान है। इसलिए अत्यधिक समेकित प्रयासों से सभी किसानों को लाभकारी मूल्यों पर वांछित गुणवत्ता वाले बीज आलू प्रदान करने की आवश्यकता है। आलू की खेती में बीज प्रमुख आदान है, जो कि खेती की कुल लागत का 45-50 प्रतिशत है। यदि खराब गुणवत्ता वाले बीज कंदों का उपयोग किया जाता है, तो शायद ही कोई अन्य आदान उपज में सुधार करने में मदद कर सकता है। गुणवत्तापूर्ण बीज का उपयोग न केवल उच्च गुणवत्ता वाले आलू के उत्पादन के लिए बल्कि टिकाऊ उत्पादन के लिए भी आवश्यक है।

अच्छी गुणवत्ता वाले बीज के प्रभाव

सफल आलू की खेती में गुणवत्ता बीज सबसे महत्वपूर्ण घटक है, जो कुल उत्पादन लागत का 40-50 प्रतिशत योगदान देता है। वर्ष 2050 तक बीज आलू के लिए अनुमानित मांग 6.1 मिलियन टन तक बढ़ने की संभावना है। दक्षिण-पश्चिम एशिया क्षेत्र में भारत ने आलू के बीज उत्पादन के लिए अच्छी तरह से विकसित सीड प्लॉट तकनीक विकसित की है। आलू में बीज उत्पादन मुख्य रूप से पारंपरिक और हाई-टेक सिस्टम के माध्यम से किया जाता है। आलू में उच्च उत्पादकता के लिए, किसानों को उचित आकार, सही कार्यिकी (फिजियोलॉजिकल) आयु और विश्वसनीय स्रोतों से रोगों से मुक्त होने के साथ सच्ची विविधता के बीज कंद का उपयोग करना चाहिए।

विकासशील देशों में आलू का उत्पादन मृदा की कम उर्वरता, कीट, रोगों और अच्छी गुणवत्ता वाले बीज कंदों की अपर्याप्त आपूर्ति जैसी बाधाओं से

अच्छी गुणवत्ता वाले बीज आलू का चयन करते समय प्रमुख बिंदु

- 'बीज' की क्रोनोलॉजिकल आयु (फसल काटने के बाद के दिन) कार्यिकी आयु (कंद के भीतर जैव रासायनिक परिवर्तन से होने वाली आंतरिक आयु) से कम महत्वपूर्ण हो सकती है।
- फिजियोलॉजिकल एजिंग को उन कारकों से जल्दी किया जा सकता है, जो श्वसन दर में वृद्धि या उतार-चढ़ाव का कारण बनते हैं। 'बीज' फसल से पहले तनावपूर्ण बढ़ती स्थितियां, कम नमी, उच्च तापमान, अपर्याप्त प्रजनन क्षमता, रोग का दबाव, ठंड, क्षति या कटाई के दौरान अत्यधिक क्षति से फिजियोलॉजिकल एजिंग की प्रक्रिया में तेजी आ सकती है। भंडारण तापमान में उतार-चढ़ाव से बचा जाना चाहिए, क्योंकि एजिंग तेज हो सकती है। 38-40^0 फारेनहाइट पर संग्रहित ट्यूबर उच्च तापमान पर संग्रहित ट्यूबर की तुलना में स्वस्थ होंगे, क्योंकि श्वसन की दर कम तापमान पर न्यूनतम है।
- उचित आकार (40-60 ग्राम) के एकसमान कंदों का रोपण वांछनीय है।
- बीज आलू सभी वायरल रोगों से मुक्त होना चाहिए।
- बीज ट्यूबर को फाइटोस्पोरा इन्फेस्टेंस द्वारा होने वाले पिछेता झुलसा, राल्स्टोनिया सोलानेसेरम के कारण जीवाणु विल्ट रोग से मुक्त होना चाहिए। रोग से मुक्ति सुनिश्चित करने के लिए रोग प्रतिरोधी किस्मों और स्वस्थ प्रमाणित बीज आवश्यक हैं। उन क्षेत्रों की पहचान की जानी चाहिए, जहां की मृदा वार्ट, सिस्ट नेमाटोड और अन्य संगरोध रोगों से मुक्त है।
- प्रमाणित बीज के साथ हर 3 वर्षों में बीज को प्रतिस्थापित करना बेहतर होता है।
- रोपण से कम से कम 10 दिनों पहले ठंडे स्टोर से बीज आलू निकाल लें। अंकुरित होने के लिए हल्की रोशनी में, छाया में, पतली परत में कंद फैलाएं और अंकुरण को 0.5-1.0 सें.मी. लंबा, मोटा और हरा बनने दें।

कुफरी चिप्सोना-3

बाधित है। छोटे और सीमांत किसानों को गुणवत्ता वाले बीज की अनुपलब्धता के कारण विकसित देशों की तुलना में भारत में आलू उत्पादकता कम है।

आलू उत्पादन में रोगमुक्त रोपण सामग्री की उपलब्धता सबसे महत्वपूर्ण है। प्रारंभिक रोगमुक्त सामग्री के गुणन की दर कम होने से कई बार फील्ड गुणन की आवश्यकता होती है, जिससे बीज कंदों में डिजनेरेटिव वायरल रोगों का प्रगतिशील संचय होता है। उपयुक्त बीज उत्पादक क्षेत्रों (वेक्टर- और अन्य आपत्तिजनक रोगों /कीटमुक्त क्षेत्रों) की सीमित उपलब्धता के कारण बीज से संबंधित समस्याएं और बढ़ जाती हैं। इस संबंध में सबसे कमजोर राज्य उत्तर-पूर्वी पहाड़ी क्षेत्र, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, ओडिशा और गुजरात हैं। आलू के बीज उत्पादन के अन्य मुद्दे जिन पर

कुफरी ज्योति

कुफरी गौरव

ध्यान देने की आवश्यकता है वे हैं: उच्च उत्पादन लागत, उचित आकार के कंदों का कम अनुपात। प्रजनकों के बीज उत्पादन के शुरुआती चरणों में आधुनिक बीज गुणन तकनीकों को एकीकृत करने के अपर्याप्त प्रयास हैं। इसके अलावा, निजी क्षेत्र और सरकारी एजेंसियों के साथ साझेदारी की जरूरत है ताकि गुणवत्ता वाले बीज के उत्पादन और आपूर्ति को विशेष रूप से गैर-पारंपरिक आलू उत्पादक क्षेत्रों में बढ़ाया जा सके।

आलू के बीज की गुणवत्ता के संकेतक

आलू के बीज कंद की गुणवत्ता भंडारण अवधि के बाद नई व वनस्पतिक वृद्धि और नए पौधों को स्थापित करने के लिए कंद व्यवहार्यता का प्रतिनिधित्व करती है। इसका मूल्यांकन अंकुर की वृद्धि दर के आधार पर किया जाता है। जैविक व्यवहार्यता शब्द का उपयोग मृदा में तेजी से बीज अंकुरित करने की क्षमता के लिए जिम्मेदार बीज के भौतिक गुणों का वर्णन करने के लिए किया जाता है।

आलू कंदों की जैविक व्यवहार्यता निम्नलिखित गुणों द्वारा निर्धारित की जाती है: कार्यिकी (फिजियोलॉजिकल) आयु, अंकुर विकास, कंद वजन और स्वास्थ्य। कार्यिकी आयु बीज के रूप में उपयोग करने के लिए कंद की व्यवहार्यता को संदर्भित करती है। इसे व्यापक रूप से 'आलू बीज कंद के विकास चरण' के रूप में परिभाषित किया जाता है। कार्यिकी आयु, बीज कंद के गठन के दौरान स्थितियों, कटाई पर परिपक्वता, भंडारण की स्थिति, क्षति की

भारत में बीज आलू उत्पादन प्रणाली

भारत में बीज उत्पादन की दो प्रमुख प्रणालियां हैं जैसे i) पारंपरिक प्रणाली और ii) हाई-टेक सिस्टम। इन प्रणालियों के तहत निम्नलिखित श्रेणियों के बीज कंद उत्पादित होते हैं:

- **बीज उत्पादन की पारंपरिक प्रणाली:** क्लोनल चयन और कंद सूचकांक (ट्यूबर इंडेक्सिंग) के माध्यम से न्यूक्लियस बीज गुणा किया जाता है। परंपरागत आलू बीज उत्पादन प्रणालियों में कम गुणा दर और क्लोनल प्रचार के दौरान अपक्षयी वायरल रोगों के प्रगतिशील संचय की समस्या है।
- **हाई-टेक बीज उत्पादन प्रणाली:** बीज की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए और खेत में एक्सपोजर को कम करने के लिए हाल ही में सीपीआरआई द्वारा हाई-टेक सिस्टम के माध्यम से बीज उत्पादन शुरू किया गया है। इस प्रणाली के तहत तीन उप प्रणालियां हैं।
- **सूक्ष्म पौधों (माइक्रोप्लान्ट्स) पर आधारित:** नोडल कटिंग के माध्यम से वायरस उन्मूलन और गुणन। नोडल कटिंग का उपयोग करके गुणन के एक चक्र में लगभग चार सप्ताह लगते हैं और औसतन 3-5 नई कटिंग एक प्लांटलेट से प्राप्त की जा सकती है।
- **माइक्रोट्यूबर्स पर आधारित:** माइक्रोट्यूबर्स कंद उत्प्रेरण परिस्थितियों में इन विट्रो में विकसित लघु कंद होते हैं। मिनीट्यूबर्स और माइक्रोट्यूबर्स को क्षेत्र के गुणनों की संख्या कम करने के लिए आलू बीज उत्पादन कार्यक्रमों में इस्तेमाल किया जा सकता है। इससे बीज उत्पादन का लचीलापन बढ़ सकता है। उत्पादित अंतिम व्यावसायिक बीज की स्वास्थ्य स्थिति में सुधार हो सकता है और नई किस्मों से बीज कम समय में पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सकते हैं। मिनी और माइक्रोट्यूबर्स का उपयोग बड़े पैमाने पर केवल तभी किया जाएगा यदि वे विश्वसनीय रूप से स्वीकार्य पैदावार पैदा करते हैं।
- **एरोपोनिक आधारित:** मृदा या कुल माध्यम के बिना एक एयर मिस्ट वातावरण में पौधों को बढ़ाना। वर्तमान में उपलब्ध प्रौद्योगिकियों में से जो हमें पौधों को एक बिना मृदा के वातावरण में विकसित करने की इजाजत देता है, एरोपोनिक्स नवीनतम और सबसे उन्नत है। एरोपोनिक प्रणाली का मुख्य लाभ यह है कि पौधों की जड़ें ऑक्सीजनीकृत होती हैं, जिससे मेटाबोलिज्म और विकास दर बढ़ जाती है। एरोपोनिक्स के साथ ग्रीनहाउस में में हम नमी, तापमान, प्रकाश, पी-एच और पानी की विद्युत चालकता को नियंत्रित कर सकते हैं।

सारणी 1. भारत में उत्पादित बीज की श्रेणियां

क्रमं.	बीज की श्रेणी	संगठन
1.	न्यूक्लियस बीज	भाकृअनुप-केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला
2.	ब्रीडर बीज/मूल बीज	भाकृअनुप- केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला
3.	फाउंडेशन/आधार बीज-1	राज्य कृषि विश्वविद्यालय, राज्य विभाग (बागवानी/कृषि), राष्ट्रीय बीज निगम (एन.एस.सी.) और भारतीय कृषि निगम (एस.एफ.सी.आई) इत्यादि।
4.	आधार-2 और प्रमाणित बीज	राज्य विभाग (बागवानी/कृषि), राष्ट्रीय बीज निगम (एन.एस.सी.) और भारतीय कृषि निगम (एस.एफ.सी.आई) इत्यादि

कुफरी पुखराज

डिग्री और स्वास्थ्य की स्थिति पर निर्भर करती है। रोपण पर अंकुर की वृद्धि दर कंदों की जैविक व्यवहार्यता को निर्धारित करती है। अंकुरण की गति, एकरूपता और अंतिम उपज पर एक मजबूत प्रभाव डाल सकती है। कंद वजन और आकार जैविक व्यवहार्यता को प्रभावित करते हैं एवं वृद्धि और पौधों की अंतिम उपज निर्धारित करते हैं। कंद आकार भी बीज की गुणवत्ता का एक महत्वपूर्ण कारक है। इसे अंकुर की संख्या और शक्ति के रूप में प्रतिबिंबित किया जाता है। यह सीमित है और कंद की कार्यिकी आयु से जुड़ा हुआ है। आलू के बीज के गुणवत्ता संकेतकों में दो आयाम होते हैं: जैविक गुण जैविक गुणवत्ता और दिखावट व्यावसायिक गुणवत्ता। उत्पादकता के लिए जैविक गुणवत्ता महत्वपूर्ण है, जबकि व्यावसायिक गुणवत्ता मुख्य रूप से बीज की कीमत को प्रभावित करती है।

जैविक गुणवत्ता

जैविक गुणवत्ता में रोग संक्रमण का स्तर और बीज कंदों की आयु शामिल है। इनमें से रोग संक्रमण का स्तर काफी जटिल और महत्वपूर्ण है। बीज कंद कई वर्षों तक लगातार लगाए जाते हैं और इससे अपघटन होता है। अपघटन कई प्रकार के वायरस और वायरस जैसे जीवों से होता है। अलैंगिक प्रचार के कारण, वायरस और वायरॉयड कंदों में जमा हो जाते हैं और आलू के अपघटन का कारण बन सकते हैं।

आलू की फसल पर लगने वाले छः सामान्य विषाणु तथा चार पादप प्लाज्मा रोग हैं। ये या तो अकेले या फिर दो से अधिक के संयोग में आलू फसल में संक्रमण कर रोग फैलाते हैं। हाल ही में मध्य भारत में आलू का तना सड़न (नेक्रोसिस) का सामना हुआ है। यह टमाटर के धब्बेदार गलन विषाणु द्वारा उत्पन्न होता है। मध्य प्रदेश तथा महाराष्ट्र में अक्टूबर के दौरान जब तापमान अधिक होता है तो उस स्थिति में यह आलू की अगेती फसल की पत्तियों तथा तनों पर 80 प्रतिशत तक थ्रिप्स द्वारा संचरण (ट्रांसमिट) किया जाता है। इससे उपज में काफी कमी हो जाती है। आलू तुर्क कन्द वाइरोइड भी बसंत मौसम में उगाये जाने वाली आलू फसल में पाया गया है। इसके अलावा उत्तर भारत में भी आलू की सितम्बर-अक्टूबर में बोई गयी अगेती फसल में आलू अग्र कुंचन विषाणु के फैलने का पता चला। यह विषाणु सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है। वायरस के अलावा कवकीय या जीवाणु रोग दो प्रकार के होते हैं: एक पर्णीय व दूसरा कन्दजनित। पर्णीय रोगों में पिछेता झुलसा, अगेता झुलसा, फोमा झुलसा, सर्कोस्पोरा पर्ण धब्बा तथा मुरझान आदि रोग होते हैं, जबकि कन्दजनित रोगों में पिछेता झुलसा, शुष्क गलन, आर्द्रगलन, साधारण खुरण्ड, काली रूसी, चूर्णी खुरण्ड, कोयला गलन, गुलाबी गलन तथा भूरा गलन आदि प्रमुख हैं। आलू की पैदावार कई कारकों से प्रभावित होती है, लेकिन मूल कारक बीज की गुणवत्ता है, खासकर इसकी जैविक गुणवत्ता। उर्वरक और सिंचाई के साथ-साथ उचित फसल प्रबंधन का उपयोग, अधिक गुणवत्ता वाले बीज का उपयोग होने पर अधिक प्रभावी हो सकता है।

'बीज कंद' की व्यावसायिक गुणवत्ता

व्यावसायिक गुणवत्ता को कंद के आकार और एकरूपता के साथ ही बाह्य उपस्थिति द्वारा परिभाषित किया जाता है। सामान्य उत्पादन के लिए बीज कंद या ट्यूबर के टुकड़ों का उचित आकार लगभग 40 से 50 ग्राम होना चाहिए। बड़े आकार के बीज कंदों से लागत में वृद्धि होगी। बहुत छोटे कंद अंकुरण से पहले ही सड़ सकते हैं या कम पैदावार का कारण बन सकते हैं। जब किसान एक विश्वसनीय स्रोत से बीज लॉट लेकर नवीनीकृत किए बिना कई फसलचक्रों के लिए अपने खेत से बचाए गए बीज आलू का उपयोग करते हैं, तो बीजजनित रोग जमा होते हैं और उपज गुणवत्ता में गंभीर कमी आती है। उपज में हानि की इस प्रक्रिया को आमतौर पर अपघटन कहा जाता है। इसे बीजजनित रोगों के संचय के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

कुफरी ख्याति

आलू बीज कंद का चयन

टिकाऊ उत्पादन प्रणाली के लिए अच्छी गुणवत्ता वाले आलू 'बीज' का चयन आवश्यक है। प्लांट स्टैंड और उपज 'बीज' कंद प्रतिशत की गुणवत्ता, आयु और स्वास्थ्य से काफी प्रभावित होती है। उत्पादकों को एक प्रतिष्ठित स्रोत से प्रमाणित 'बीज' लॉट प्राप्त करना चाहिए, जो रोगमुक्त और स्वस्थ हो।

भारत में बीज खेत विधि

वर्ष 1960 के मध्य तक आलू का बीज उत्पादन उच्च पहाड़ियों तक सीमित था। इसने भारत में आलू के विस्तार को प्रतिबंधित कर दिया था। मैदानों में वसंत फसल के बीज पूरी तरह से एफिड के संपर्क में थे और बीज एक सीजन के भीतर खराब हो जाते थे। इस प्रकार मैदानों में हर साल बहुत अधिक लागत पर उत्पादकों द्वारा इसे प्रतिस्थापित किया जाना आवश्यक था। यह केवल वर्ष 1965 की ही बात है, जब केंद्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, जालंधर में उत्तर-पश्चिमी मैदानी इलाकों में एफिड मुक्त/कम एफिड स्थितियों के तहत 'सीड प्लॉट तकनीक' से गुणवत्ता वाले बीज उत्पादन को एक वास्तविकता में परिपूर्ण किया गया था। 'सीड प्लॉट तकनीक' के विकास के परिणामस्वरूप रोगमुक्त बीज उत्पादन का प्रमुख केंद्र पहाड़ियों से मैदानी इलाकों में स्थानांतरित हो गया। मैदानों में 'सीड प्लॉट तकनीक' के माध्यम से उत्पादित बीज न केवल 30-40 प्रतिशत उच्च उपज देता है, बल्कि कई मृदा और कंद से पैदा होने वाले रोगों और कीटों से भी मुक्त होता है।

सीड प्लॉट तकनीक की कृषि तकनीकें

- बीज उपचार
- रोपण से पहले कंद अंकुरण
- जल्दी रोपण
- तेजी से कृषि संबंधी कार्य संचालन के लिए मशीनीकरण
- नियमित स्प्रे के माध्यम से एफिड वैक्टर और रोगों का नियंत्रण
- रोगिंग
- एफिड गिनती क्रांतिक स्तर को पार करें, इससे पहले तनों को काटना।

सीड प्लॉट तकनीक के सिद्धांत

इस तकनीक में स्वस्थ बीज से अक्टूबर से जनवरी के पहले सप्ताह के बीच एकीकृत कीट और रोग प्रबंधन, रोगग्रस्त और निष्फल पौधों को कंद समेत निकालना आदि की रणनीति का प्रयोग करते हैं। इसमें कम एफिड संख्या अवधि के दौरान बीज फसल का उगाना तथा जब तक इनकी संख्या क्रांतिक स्तर को पार करें, इससे पहले ही दिसंबर के अंतिम सप्ताह तक तनों को नष्ट कर देना शामिल किया गया है। इस प्रकार इस तकनीक के अंतर्गत बुआई की तिथि दिसंबर के अंत से घटाकर अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में कर दी गयी, जिससे उष्णकटिबंधीय मैदानी क्षेत्रों में भी अच्छे गुणों वाले बीज का उत्पादन संभव हो सका।

तकनीक की पात्रता

- फसल बुआई के पश्चात कम से कम 75 दिनों तक का समय एफिड या विषाणुवाहक कीटों से मुक्त अथवा कम एफिड/कीट संख्या वाला होना चाहिए।
- फसल अवधि के दौरान न्यूनतम तथा अधिकतम तापमान 8^0 से 28^0 सेल्सियस के बीच होना चाहिए।
- प्रयोग में लाने जानी वाली किस्मों की अपघटन दर धीमी होनी चाहिए।

तनों को नष्ट करना

उत्तर-पश्चिमी मैदानी इलाकों में दिसंबर के तीसरे सप्ताह में तथा उत्तर-पूर्वी मैदानी इलाकों में जनवरी के पहले सप्ताह में तने काटने के 7 से 10 दिनों पहले सिंचाई को रोक दिया जाना चाहिए। बीज की फसल में, एफिड संख्या क्रांतिक स्तर तक पहुंचने से पहले ग्रामॉक्सोन/2.5 से 3.0 लीटर प्रति हैक्टर तक छिड़ककर या मैन्युअल रूप से तने काट देने चाहिए। तने काटने के बाद उजागर कंदों को पुन: मिट्टी से ढक देना चाहिए। तनों के पुन: विकास की जांच करें और यदि कोई हो, तो पुन: विकास को हटा दें।

बीज वितरण

कई राज्यों में, सरकार के पास आलू के किसानों को सब्सिडी दरों पर प्रमाणित बीज वितरित करने की नीति है। यह आलू के क्षेत्र और वार्षिक उत्पादन को प्रभावित करने वाले कारकों में से एक है। आमतौर पर राज्य के बागवानी

कुफरी चन्द्रमुखी

विभागों के पास किसानों के लिए अच्छी गुणवत्ता वाली रोपण सामग्री प्रदान करने की जिम्मेदारी होती है। आलू की फसल के लिए विभाग, केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला से मूल बीज खरीदता है। यदि आवश्यक हो तो प्रगतिशील किसानों को प्रमाणित बीजों का उत्पादन करने के लिए आधार बीज की आपूर्ति की जाती है। बागवानी विभाग, किसानों की बीज मांग के बीच वितरित करने के लिए प्रमाणित बीज वापस खरीदता है। भारत में प्रमुख बीज उत्पादक क्षेत्र-उत्तर पश्चिमी राज्य, पंजाब और उत्तर प्रदेश के राज्य और कुछ हद तक पश्चिम बंगाल हैं। औपचारिक प्रणाली के माध्यम से उत्पादित बीज, उत्तर-पूर्वी भारत जैसे बीज उत्पादन क्षेत्र से बहुत दूर किसानों की मांग को पूरा करने में सक्षम नहीं है। छोटे और मध्यम किसानों की, गुणवत्ता वाले बीज आलू के लिए सहकारी समितियों पर अधिक निर्भरता है, जबकि मध्यम और बड़े किसान सहकारी समितियों की तुलना में निजी बीज कंपनियों से अधिक बीज खरीदते हैं। लघु किसान अपने खेतों में ब्रीडर बीज गुणन करते हैं। इसलिए कुछ क्षेत्रों में फसल स्वास्थ्य संतोषजनक है, बल्कि दूसरों में बड़ी नाकामयाबी का सामना करना पड़ता है।

भारत, एशिया का एकमात्र अग्रणी देश है, जिसने उप-उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों के लिये कम एफिड अवधि और मृदा से उत्पन्न रोगों तथा कीट की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर वैज्ञानिक बीज उत्पादन तकनीक विकसित की है। अधिकांश किसान सीपीआरआई द्वारा विकसित 'बीज खेत विधि' का पालन करके अनौपचारिक आलू बीज का उत्पादन और विपणन कर रहे हैं। केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान के पास भारत भर में 15 इकाइयों में वितरित लगभग 521 हैक्टर कृषि क्षेत्र है। भारत, जापान के अलावा एशिया का एकमात्र देश है, जिसका अच्छी तरह से स्थापित एक बीज उत्पादन कार्यक्रम है। वर्तमान में सीपीआरआई सालाना 3000 टन मूल बीज पैदा करता है। उसमें से लगभग 2500 टन की आपूर्ति, किसानों और आगे गुणन के लिए तथा केंद्रीय और राज्य सरकारी एजेंसियों को करता है। यह प्रजनक बीज 25 प्रतिशत वार्षिक बीज प्रतिस्थापन दर की दर से देश की कुल प्रमाणित बीज आवश्यकता का 55 प्रतिशत से अधिक पूरा करने के लिए पर्याप्त है। इसकी उच्च गुणवत्ता के कारण, संस्थान द्वारा उत्पादित मूल बीज आलू बीज प्रमाणीकरण में उच्च मानकों को अपनाया जाता है। इसके बीज उत्पादन कार्यक्रम को दुनिया में सबसे अच्छा माना जाता है।

आलू के बीज उत्पादन में, कम बीज गुणात्मक दर की समस्या, उपज में बीज आकार के कंदों का कम अनुपात, उच्च उत्पादन और अपघटन की उच्च दर के साथ घिरा हुआ है। उपयुक्त बीज उत्पादन क्षेत्रों की सीमित उपलब्धता के कारण बीज से संबंधित समस्याएं और बढ़ी हैं। इस संबंध में सबसे कमजोर राज्य उत्तर-पूर्वी पर्वतीय क्षेत्र, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, ओडिशा और गुजरात हैं। गुणवत्तापूर्ण कंद बीज के उत्पादन के लिए उपयुक्त क्षेत्रों की पहचान करने की आवश्यकता है। कम उत्पादकता वाले राज्यों में टीपीएस को गुणवत्ता रोपण सामग्री उत्पादन के लिए एक व्यवहार्य विकल्प के रुप में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसके लिए उच्च प्रत्यारोपण अस्तित्व के साथ शुरुआती थोक टीपीएस की पहचान करने के लिए प्रयास किया जाना चाहिए। इसके अलावा अपोमिक्स के माध्यम से व्यावसायिक आलू की किस्मों के वास्तविक प्रकार के वनस्पति बीजों के उत्पादन के लिए प्रौद्योगिकियों को विकसित करने हेतु बुनियादी शोध किया जाना चाहिए। हाल ही में सीपीआरआई ने बायोटेक्नोलॉजी और एयरोपोनिक्स जैसी उच्च तकनीक विधियों का उपयोग करके बीज आलू के स्वस्थ मातृ स्टॉक के उत्पादन पर बहुत अधिक जोर दिया है। ■

मई-जून में बागों में की जाने वाली आवश्यक कृषि क्रियाएं

राम रोशन शर्मा[1] और **हरे कृष्णा**[2]

वसंत के जाते ही बढ़ते तापमान के साथ ग्रीष्म ऋतु का आगमन होता है, जिसका बागों में की जाने वाले कृषि क्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है। इन दिनों जहां सदाबहार फल वृक्षों जैसे-आम, अमरूद, लीची, नीबूवर्गीय फल एवं पपीता आदि फलों के नए बाग स्थापित करने की शुरुआत होती है, वहीं आम की अगेती किस्मों के पके हुए फलों को तोड़कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था भी करनी होती है।

शीतोष्णवर्गीय फलों जैसे सेब, नाशपाती, आडू, आलूबुखारा आदि में फल लगने एवं फल बढ़ोतरी की क्रियाएं इस मौसम में शुरू हो जाती हैं। इसी प्रकार शुष्कवर्गीय फल बेर में काट-छांट, खजूर में फलों का विरलीकरण और अनार में बहार नियंत्रित करने की प्रक्रिया करनी होती है। प्रस्तुत लेख में इसी संदर्भ में अधिक जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

नवस्थापित केले का बाग

केला

मई में भी एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। अवांछित पत्तियों को निकाल देना चाहिए। फलों के गुच्छों को धूप से बचाने के लिए पत्तियों से ढक देना चाहिए। नए बाग लगाने के लिए रेखांकन के पश्चात गड्ढे खोद लेने चाहिए।

जून के अंतिम सप्ताह में खोदे गए गड्ढों को गोबर की खाद, उर्वरक व मिट्टी को बराबर मात्रा में मिलाकर ऊपर तक भरें। गड्ढों में मिट्टी भरने के तुरंत बाद पानी अवश्य देना चाहिए ताकि मिट्टी बैठ जाए। पुराने बागों में जिन पत्तियों पर धब्बे वाला रोग दिखाई दे उन्हें काटकर मिट्टी में गहरा दबा दें या जला दें, तथा कवकनाशी ब्लिटॉक्स-50 का 0.3 प्रतिशत (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) घोलकर छिड़काव करें। उकठा रोग की रोकथाम के लिए कंदों को एग्नॉल से उपचारित करें।

यह समय केले की रोपाई के लिए उपयुक्त होता है। रोपण हेतु तीन माह पुरानी, तलवारनुमा, स्वस्थ व रोगमुक्त पत्ती वाले कंदों का ही प्रयोग करें। पत्तियों के ऊपरी तने को कन्द से 25-30 सें.मी. पर काट दें। रोपाई से पूर्व सभी पत्तियों को (एक ग्राम बाविस्टीन प्रति लीटर पानी के घोल में) उपचारित कर लें। रोपाई के समय केवल कन्द भाग को ही मिट्टी में दबाएं तथा रोपाई के बाद सिंचाई करें।

अमरूद

ये महीने अमरुद के फलों के विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं। गर्मियों में आमतौर पर वातावरण निरंतर शुष्क हो जाता है, जिससे मृदा में पानी की कमी होने लगती है। अत: उचित समय पर सिंचाई नहीं होने पर फलों की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ता है, जिसके परिणामस्वरूप वे छोटे रह जाते हैं। इसलिए 8-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। मई में यदि बगीचों में फल मक्खी अथवा अन्य कीटों का प्रकोप हो तो क्विनोल्फॉस 25 ई.सी. का 2 मि.ली. प्रति लीटर या मेलाथियान 50 ई.सी. का 1 मि.ली. प्रति लीटर या मोनॉक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यूएससी 2 मि.ली. प्रति लीटर की दर से या 3 प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव करें। छिड़काव प्रात:काल या देर शाम में 21 दिनों के अंतराल पर कम से कम 4 बार करना चाहिए।

मनोहारी अमरूद

जून में नए अमरूद के बागों की स्थापना के लिए खेत को भलीभांति तैयार करें। पौधे लगाने के लिए गड्ढों को 3×3 मीटर दूरी पर खोदा जाना चाहिए। प्रत्येक गड्ढे को 10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 1 कि.ग्रा. नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरपाइरीफॉस की धूल एवं ऊपरी मिट्टी के साथ मिलाकर भरा जाना चाहिए। पौधों में जिंक की कमी हो जाने पर पत्तियां छोटी एवं पीली हो जाती हैं। इसके नियंत्रण के लिए आधा कि.ग्रा. जिंक सल्फेट और आधा कि.ग्रा. बुझे हुए चूने का घोल 100 लीटर पानी में बनाकर इसका छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार करना चाहिए।

अंगूर

नई बेलों में सिंचाई 10-15 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए। मई के अंत तक तैयार परलेट और ब्यूटी सीडलेस किस्मों के तैयार गुच्छों को तोड़कर बाजार भेजने की

[1]खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012; [2]भाकृअप-केंद्रीय शुष्क बागवानी अनुसंधान संस्थान, बीछवाल, बीकानेर-334006 (राजस्थान)

व्यवस्था करनी चाहिए। जब किस्में पकनी आरंभ हो जाएं तो उनमें सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। फलों में ठोस घुलनशील पदार्थों की अत्यधिक कमी हो जाती है एवं फल फटने लगते हैं। ऐसे फलों को बाजार में बेचना मुश्किल हो जाता है। एंथ्रेक्नोज (श्याम व्रण) का प्रकोप हो तो बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव एक सप्ताह के अंतराल पर दो बार करना चाहिए। चूर्णिल फफूंद की रोकथाम के लिए केराथेन (0.1 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव अथवा सल्फर की धूल का प्रयोग करना चाहिए। इन महीनों में थ्रिप्स का भी प्रकोप कहीं-कहीं रहता है। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 500 मि.ली. प्रति 500 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

बेर

देश के उत्तरी और पश्चिमी भागों में कटाई-छंटाई के काम के लिए मई-जून का महीना, जब पौधों की अधिकांश पत्तियां झड़ चुकी होती हैं तथा पेड़ सुषप्तावस्था में हों, सबसे उपयुक्त माना जाता है। छोटे पौधों में 60-90 सें.मी. तक की ऊंचाई तक तने पर निकलने वाली शाखाओं को काट देना चाहिए और इसको लकड़ी अथवा बांस के सहारे सीधा करना चाहिए। बड़े वृक्षों की चटकी, टूटी और जमीन को छूती शाखाओं को छांट देना चाहिए। एक-दूसरे से मिली हुई शाखाओं को भी काट देना चाहिए। छंटाई का कार्य जहां तक संभव हो सके, मई में पूरा कर लेना चाहिए। कटाई-छंटाई करते समय, सामान्यत: पिछले वर्ष की शाखाओं का 50 प्रतिशत भाग काट देते हैं। तृतीय शाखाओं को पूर्ण रूप से एवं द्वितीय शाखाओं की 15-20 कलियां काट देने पर मजबूत एवं ओजस्वी शाखाएं निकलती हैं। रोगों के प्रकोप से बचाव के लिए शाखाओं के कटे हुए स्थानों पर फफूंदनाशी (नीला थोथा या ब्लाइटॉक्स-50) का लेप लगा देना चाहिए। काट-छांट के लिए तेज धार वाले औजार का प्रयोग करना चाहिए ताकि शाखा क्षतिग्रस्त न हो। जून अत्यधिक गर्म रहता है। पेड़ों में जब तक फुटाव न हो तब तक सिंचाई नहीं करनी चाहिए। जिन वृक्षों में छंटाई का कार्य रह गया हो, उनमें जून के प्रथम सप्ताह तक यह कार्य पूरा कर लेना चाहिए।

छंटाई के पश्चात कटी हुई लकड़ियों और शाखाओं को हटाकर साफ करना चाहिए। गर्मी में एक-दो बार पेड़ों के नीचे जुताई करने से हानिकारक कीड़े-मकोड़ों के अंडे तथा प्यूपे नष्ट हो जाते हैं। पौधों के मुख्य तनों के चारों ओर 60 सें.मी. तक की दूरी का घेरा छोड़कर पेड़ के बाहरी घेरे नाली से जोड़ देना चाहिए।

बेर में काट-छांट

बेर में एक साल के पौधे के लिए 5 कि.ग्रा. गोबर/कम्पोस्ट खाद, 50 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्राम फॉस्फेट व 25 ग्राम पोटाश तथा यही मात्रा क्रमश: बढ़ाकर 8 या उससे अधिक उम्र के पौधे के लिए 40 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 400 ग्राम नाइट्रोजन, 400 ग्राम फॉस्फेट व 200 ग्राम पोटाश प्रति पौधे की दर से प्रयोग करें।

चीकू

मई में जब कड़ी धूप हो, बगीचे की गहरी जुताई करें। लगभग 15 दिनों तक बगीचे की खाली जगह में धूप आने दें। ऐसा करने से कीटों के अंडे नष्ट हो जाएंगे तथा बाग में ज्यादा कीटनाशकों के छिड़काव से बचा जा सकेगा। इस समय बाग में सिंचाई बिल्कुल न करें। नए बाग लगाते समय मानकीकृत किस्में लगाएं। बाग में मैग्नीशियम, सल्फर, बोरॉन, आयरन, जिंक की पूर्ति के लिए क्रमश: 1 प्रतिशत मैग्नीशियम नाइट्रेट, 1 प्रतिशत कैल्शियम सल्फेट, बोरेक्स (5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर), आयरन सल्फेट (0.5 प्रतिशत), जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) डालें। बाग में नाइट्रोजन, पोटेशियम और फॉस्फोरस

आम

मानसून के आगमन से पूर्व, नए बाग लगाने के लिए मई में उचित दूरी पर बाग का रेखांकन (निशान लगाने) के बाद गड्ढे खोदने का कार्य पूरा कर लेना चाहिए। नर्सरी में बीज पौधों की आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए एवं खरपतवार निकाल देने चाहिए। पके हुए फलों का चिड़ियों आदि से बचाव करना चाहिए। फलों की आंतरिक सड़न रोकने के लिए बोरेक्स (4 कि.ग्रा./100 लीटर) का छिड़काव करना चाहिए।

लुभावने आम

जून में नीचे गिरे फलों को इकट्ठा कर इन्हें स्थानीय बाजारों में भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। पेड़ों के नीचे की जमीन साफ-सुथरी होनी चाहिए। यदि अगेती किस्म के फल पक गए हों तो उन्हें तोड़कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करें।

आलूबुखारा

ग्रीष्म ऋतु आते ही आलूबुखारे में खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है अत: समय-समय पर इन्हें निकाल देना चाहिए। वृक्षों के समुचित विकास के लिए मई-जून में एक सप्ताह के अंतराल पर नियमित रूप से सिंचाई करनी चाहिए। जिन जगहों पर सिंचाई की उचित व्यवस्था न हो वहां पेड़ों के नीचे पलवार (मल्च) बिछा देनी चाहिए। इसके अन्य लाभ भी हैं, जैसे इसके प्रयोग से खरपतवार का उगना कम हो जाता है। यह मृदा के तापमान को भी ठीक रखता है साथ ही अच्छी गुणवत्ता के फल भी प्राप्त होते हैं।

रसीले आलूबुखारे

गर्मी के दिनों में पेड़ों को तेज धूप के हानिकारक प्रभाव से बचाने के लिए मुख्य तने पर नीले थोथे के घोल का लेप कर देना चाहिए। इसकी किस्मों ब्यूटी, सांता रोजा और मैथिली में अधिक फल लगते हैं एवं पेड़ों की शाखाएं फलों का भार न सह पाने के कारण टूट भी जाती हैं। इसके लिए बांस या मजबूत लकड़ी का सहारा देना चाहिए।

के साथ-साथ सूक्ष्मपोषक तत्वों की मृदा में कमी के प्रति सजग रहें। किसी भी खाद को डालने से पहले मृदा की जांच निकटतम संस्था से अवश्य करवाएं और जरूरत के अनुसार ही प्रयोग करें। भारत सरकार द्वारा विभिन्न कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों और राज्य सरकारों के अंतर्गत मृदा प्रयोगशालाओं में, मृदा की जांचकर मृदा स्वास्थ्य कार्ड (सॉयल हेल्थ कार्ड) बनाएं जा रहे हैं।

अनार

उत्तर-पश्चिमी भारत के शुष्क क्षेत्रों में जहां सिंचाई के सीमित संसाधन उपलब्ध हैं, उन क्षेत्रों में मृग बहार पसंद की जाती है। महाराष्ट्र के सिंचित क्षेत्रों में अम्बे बहार को पसंद किया जाता है। मृग बहार वाले क्षेत्रों में अप्रैल-मई से ही खेतों में सिंचाई रोक दी जाती है। सिंचाई रोकने के 45 दिनों के बाद पौधों की हल्की छंटाई करनी चाहिए। छंटाई के तुरंत पश्चात, उर्वरकों संस्तुत खुराक और सिंचाई शुरू कर देनी चाहिए। सामान्यत: अनार के पौधों में 10-15 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस एवं 125 ग्राम पोटेशियम प्रतिवर्ष प्रतिवृक्ष डालनी चाहिए। खाद एवं उर्वरकों को पौधों के छत्रक के नीचे चारों ओर 8-10 सें.मी. गहरी खाई बनाकर देना चाहिए। यह पुष्पन और फलन की अभिवृद्धि करता है। वैकल्पिक रूप से सिंचाई रोकने के 45 दिनों बाद, पत्तियों को गिराने के लिए, एथरेल 1000 पीपीएम, प्रोफेनोफॉस 2 मि.ली. प्रति लीटर, मेटासिड 2 मि.ली. प्रति लीटर, थायोयूरिया 3 ग्राम प्रति लीटर या यूरिया फॉस्फेट 5 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव करें। तेलिया रोग से संक्रमित क्षेत्रों में मृग बहार नहीं लिया जाना चाहिए। मई के तीसरे सप्ताह से जून के आखिरी सप्ताह एवं इसके बाद भी रासायनिक जैवनाशियों का प्रति सप्ताह प्रयोग करें।

मानसून के दौरान अनार के नए बाग लगाने हेतु, रेखांकन एवं गड्ढे खोदने का कार्य भी मई-जून में ही पूर्ण कर लेना चाहिए। सामान्यत: 4-5 मीटर की दूरी पर अनार का रोपण किया जाता है। पौध रोपण के एक माह पूर्व 60 x 60 x 60 सें.मी. आकार के गड्ढे खोदकर 15 दिनों के लिए खुले छोड़ दें। इसके बाद गड्ढे की ऊपरी मिट्टी में 10-15 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 1 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट, 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस चूर्ण मिट्टी में मिलाकर गड्ढों को सतह से 15 सें.मी. ऊंचाई तक भर दें। गड्ढे भरने के बाद सिंचाई करें। ताकि मिट्टी भलीभांति बैठ जाए।

जापानी अलूचे की लगभग सारी किस्मों में बहुत फल लगते हैं। यदि सभी फलों को पेड़ों पर छोड़ दिया जाए तो फल छोटे आकार के होते हैं। अत: फलों की छंटाई कर देनी चाहिए। फलों की छंटाई हाथ से अथवा नेफ्थेलीन एसिटिक एसिड अम्ल 50 पी.पी.एम. (50 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करें। पौधों की वृद्धि के लिए नाइट्रोजन की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। अत: 0.5 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव फूलों की पंखुड़ियों के झड़ने से लेकर फलों के पकने के 2 सप्ताह पहले तक किया जा सकता है। जिंक और लौह तत्व की कमी की पूर्ति के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और फेरस सल्फेट के घोल का पर्णीय छिड़काव करें। चिड़ियों से फलों की रक्षा करनी चाहिए तथा यदि पत्ती खाने वाले कीट का प्रकोप हो तो सेविन (कार्बारिल) के 0.05 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

सेब

तनों की छाल को गर्मी से बचाने के लिए घास से बांध देना चाहिए। इस मौसम में अपस्थानिक शाखाएं (सकर) भी बहुत निकलती हैं। ये पौधों से अधिकाधिक पोषक तत्व लेती हैं। इनको जल्द से जल्द हटा देना चाहिए। इस मौसम में फलों का गिरना भी प्रमुख समस्या है। इसे रोकने के लिए नेफ्थलीन एसिटिक अम्ल का छिड़काव फलों के लगने के चार से पांच सप्ताह बाद करना चाहिए।

चूर्णिल फफूंद का प्रकोप होने पर केराथेन 0.03 प्रतिशत (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) या चूना और गंधक को 1:40 के अनुपात में मिलाकर छिड़काव करें। गंधक चूने के उपयोग से रोगों और कीटों दोनों को नियंत्रित कर सकते हैं। यदि पौधों में जिंक की कमी हो तो 0.1 प्रतिशत (1 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करना चाहिए। बोरॉन की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत सुहागा (5 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें।

खजूर

नए बाग लगाने के लिए, गड्ढे जून में खोदते हैं। गड्ढे की दूरी किस्म के अनुसार 6-8 मीटर रखते हैं। फल सेट होने के बाद मई माह में, गुच्छों के मुख्य डंठल को नीचे की ओर मोड़ देते हैं, ताकि ये बिना पत्तियों के मध्य शिरा को छुए नीचे लटकती रहे। इससे बढ़ते फलों के वजन से डंठल के टूटने का खतरा कम हो जाता है। साथ ही पत्तियों के मध्य शिरा की रगड़ से फलों को होने वाला नुकसान भी कम होता है।

फलों से लदा खजूर का पौधा

मई के अंतिम सप्ताह से जून के प्रथम सप्ताह तक फलों के विरलीकरण का कार्य भी पूरा कर लेना चाहिए। यह आमतौर पर या तो एक गुच्छे पर लगे फलों की संख्या को कम कर या कुछ गुच्छों को हटाने के द्वारा पूरा किया जाता है। पौधे की उम्र तथा किस्म के आधार पर, प्रति पौध 5 से 10 गुच्छों या 1300 और 1600 फलों को बनाए रखने में सक्षम होनी चाहिए। इसके बाद प्रत्येक गुच्छे के केंद्र से एक-तिहाई फलों की लड़ियों को काटकर अलग कर देना चाहिए, जिससे फल जल्दी पकते हैं तथा उनकी गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

फलों की छंटाई अथवा विरलीकरण की तीव्रता खद्रावी किस्म में 40-50 प्रतिशत, जैदी और बरही में 50-60 प्रतिशत तथा हलावी किस्म में 50-55 प्रतिशत तक होनी चाहिए। मई-जून के दौरान, बागों में सिंचाई की नियमित रूप से व्यवस्था होनी चाहिए। जून के अंत से फल डोका अवस्था में आने लगते हैं, अत: उन्हें जैव निम्नीकरणीय प्लास्टिक की चादरों से ढक देना चाहिए, ताकि संभावित वर्षा से होने वाले नुकसान से फलों को बचाया जा सके। पक्षियों से होने वाले नुकसान को रोकने के लिए फलों को लोहे की जालियों से भी ढकते हैं। जून के तीसरे से चौथे सप्ताह में अगेती प्रजातियों जैसे नागल, मस्कट, तायर, सायर, हलावी, खूनैजी में तुड़ाई प्रारंभ कर सकते हैं। इनमें अधिकांशत: फल डोका अवस्था में पहुंच जाते हैं। इन फलों को ताजे फलों के रूप में या प्रसंस्करण के बाद छुहारा बनाने में प्रयोग में लाया जा सकता है।

पपीता

मई में बाग का रेखांकन करने के बाद गड्ढे भरने का कार्य समाप्त कर लेना चाहिए। पछेती किस्मों के तैयार फलों को बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करनी

पपीते की भरपूर उपज

चाहिए। नर्सरी में लगे छोटे-छोटे पौधों को गर्मी से बचाव की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। नर्सरी पर छप्पर डाल देना चाहिए। नर्सरी के पौधों की साप्ताहिक अंतराल पर सिंचाई की नियमित व्यवस्था आवश्यक है। बाग में लगे पौधे को तीन तरफ से घास या पुआल से ढक देना चाहिए। जून में नर्सरी के पौधों को निकालकर बाग में रोप देना चाहिए एवं उसके तुरंत बाद सिंचाई करना अति आवश्यक है। पुराने बागों की बजाय नये बागों में पानी की अधिक आवश्यकता होती है।

नीबूवर्गीय फल

नए बाग लगाने के लिए मई में बाग का रेखांकन करके गड्ढे खोद लेने चाहिए। पौधशाला के पौधों की नियमित सिंचाई, गुड़ाई और निराई करते रहना चाहिए। बाग में 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। मौसम में अधिक तापमान व बढ़ती गर्मी के कारण फलों की बढ़वार रुक जाती है एवं फलों का गिरना एक प्रमुख समस्या बन जाता है। अत: 2, 4 डी (10 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करना काफी लाभदायक रहता है।

जून के अंत में खोदे गए गड्ढों में गोबर की खाद, उर्वरक और मिट्टी की बराबर मात्रा मिलाकर भर देनी चाहिए मिट्टी भरने के पश्चात सिंचाई अवश्य करनी चाहिए ताकि मिट्टी बैठ जाए। जल निकास नालियों को साफ कर देना चाहिए। फलदार पौधों में नाइट्रोजन एवं पोटाश की दूसरी मात्रा को इसी माह देना लाभदायक रहता है।

नीबू में एक वर्ष के पौधे में 25 ग्राम नाइट्रोजन व 25 ग्राम पोटाश (जो क्रमश: बढ़कर 10 वर्ष या उससे अधिक आयु के पौधे के लिए 250 ग्राम नाइट्रोजन व 250 ग्राम पोटाश हो जाएगी) का प्रयोग इस माह या फल लगने के दो माह बाद करें। जस्ते की कमी दूर करने के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट या आवश्यकतानुसार अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव करें।

लीची

मई में पौधों की 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए ताकि फलों में नियमित वृद्धि होती रहे। अन्य फलों की भांति लीची बाग का रेखांकन भी मई में ही कर लेना चाहिए। रेखांकन उपरांत 3 × 3 फुट आकार के गड्ढे खोद लें व उन्हें एक महीने बाद गोबर की खाद, रासायनिक खाद व मिट्टी की बराबर मात्रा से भर लेना चाहिए। कुछ किस्मों के फल मई में पकना शुरू हो जाते हैं। उन्हें बर्रों से बचाना चाहिए।

फलों को सुबह या शाम को तोड़कर भेजने की समुचित व्यवस्था आवश्यक है। फलों के पकने के समय उनके फटने की समस्या लीची में अत्यधिक है। पौधों में नियमित सिंचाई करते रहना चाहिए अन्यथा मई व जून में अचानक वर्षा होने या सिंचाई करने से फलों के फटने की अत्यधिक समस्या बढ़ जाती है। यदि फिर भी फल फटे तो पौधों पर समयानुसार जिब्रेलिक अम्ल (4 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव काफी लाभदायक रहता है। जिंक सल्फेट के 1.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर फल की निंबोली अवस्था से फलों की तुड़ाई तक करने पर फलों के फटने (चटकने) की समस्या काफी कम हो जाती है। माईट के प्रकोप को कम करने के लिए डाइमिथोएट (100 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव लाभकारी रहता है। लीची में गूटी बांधने का कार्य जून के दूसरे पखवाड़े में करें। इसमें मिलीबग की रोकथाम के लिए थालों में 2 प्रतिशत कीटनाशी धूली डालकर गुड़ाई करें।

फालसा

फालसे के फलों की उचित बढ़वार के लिए 15 दिनों के अंतराल पर नियमित रूप से सिंचाई करते रहें। फालसे में फलों का पकना अप्रैल के अंतिम सप्ताह में शुरू हो जाता है, जो जून के प्रथम सप्ताह तक जारी रहता है। इसके फल अत्यंत नाजुक होते हैं। अत: इनकी तुड़ाई सुबह या शाम को ही करनी चाहिए और तुरंत बाद फलों को बाजार में भेजने की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए।

फलों की समाप्ति के बाद पौधों की काट-छांट अवश्य करें। इसे जून के अंतिम सप्ताह तक समाप्त कर लेना चाहिए। उचित काट-छांट से फालसे के पौधे का आकार अच्छा रहता है व अगले वर्ष इसमें फसलें अच्छी व नियमित रूप से आती हैं।

आंवला

पौध रोपण के लिए गड्ढे जून में खोदते हैं तथा गड्ढे की दूरी किस्म के अनुसार 8-10 मीटर रखते हैं। जून में 1 × 1 × 1 मीटर आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए। इन्हें 15 दिनों के बाद 10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 1 कि.ग्रा. नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरपाइरीफॉस की धूल एवं ऊपरी मृदा के साथ मिलाकर भरना चाहिए। आंवले में स्वयं-बंध्यता पाई जाती है। अत: कम से कम दो किस्में अवश्य लगाते हैं, जो एक दूसरे के लिए परागणकर्ता का कार्य करती हैं।

आंवला

आंवला एक पर्णपाती वृक्ष है। इसके पेड़, फल लगने के बाद, गर्मियों के मौसम में सुषुप्तावस्था में प्रवेश कर जाते हैं। मानसून आने तक उसी अवस्था में रहते हैं। इसलिए पौधों को गर्मियों के दौरान, अन्य फसलों की तुलना में ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। हालांकि 10-15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई लाभकारी होती है। एकांतरित दिनों पर, ड्रिप से सिंचाई, फलों के विकास और आंवला की उपज की बढ़ोतरी के लिए उपयोगी पाई गई है। इसके अतिरिक्त, इससे खरपतवार भी कम उगते हैं।

मई-जून की गर्मियों में मृदा में नमी संरक्षण के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों जैसे धान के भूसे, स्थानीय घास, केले के पत्ते या गन्ने के कचरे को पलवार के रूप में 20 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष की दर से थालों में बिछा सकते हैं। इस पलवार को 10-15 सें.मी. मोटाई तक एकरूप ढंग से वितरित किया जाना चाहिए। यदि पॉलीथीन का पलवार उपयोग करना हो तो, 100 माइक्रॉन मोटी फिल्म का प्रयोग कर सकते हैं। ■

फल और सब्जियों के बीज उत्पादन से समृद्धता

अब तक बात की जा रही थी कृषि उत्पादों के उत्पादन को बढ़ाकर कृषक समुदाय की आय में बढ़ोतरी करने की। इसी क्रम में इसमें एक और नया आयाम जुड़ गया है। विभिन्न फलों एवं सब्जियों के बीज उत्पादन को आय के स्रोत के तौर पर विकसित करने का। प्रस्तुत लेख में इन नए ट्रेण्ड के महत्व पर प्रकाश डाला जा रहा है।

फल और सब्जियों के बीजों का कारोबार एक बड़े उद्योग के रूप में उभर रहा है। किसान अब बीज के लिए भी फल और सब्जियों की खेती करके अधिक लाभ कमा सकते हैं। प्रमुख रूप से चुकंदर, गोभी, फूलगोभी, प्याज, मटर, अनार, मूली और इमली के बीजों की देश-विदेश में मांग बढ़ रही है। महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश और ओडिशा जैसे राज्य बीज खेती के प्रमुख क्षेत्रों के रूप में उभर रहे हैं। सब्जी उत्पादन में एशियाई देशों में भारत का पहला स्थान है, जबकि सब्जियों के बीज व्यापार में पांचवां स्थान है।

कृषि और प्रसंस्करित खाद्य एवं उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) की ताजा रिपोर्ट के अनुसार भारत से वर्ष 2017-18 में दुनिया में फल और सब्जियों के बीजों की 14,463.14 मीट्रिक टन मात्रा का निर्यात किया गया, इसकी कीमत 670.9 करोड़ रुपये थी। बांग्ला देश, पाकिस्तान, अमेरिका, नीदरलैंड, थाईलैंड और जापान भारतीय बीजों के प्रमुख आयातक देश हैं। इनके अतिरिक्त अन्य देशों में भी भारतीय बीजों की मांग बढ़ रही है।

देश के फल और सब्जी उत्पादक किसानों को अब बीज उत्पादन के लिए कृषि विभाग की तरफ से प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसका उद्देश्य है किसानों को फल और सब्जियों के बीजों के उत्पादन के क्षेत्र में कमाई का अवसर उपलब्ध करवाना।

इन बीजों की खेती करने के लिए किसानों को कुछ खास बातों को ध्यान में रखना चाहिए। बीज उत्पादन में तापमान को निश्चित स्तर पर बनाए रखना आवश्यक होता है। बेहतर

अनार दाना है उपयोगी

फल एवं सब्जियों के बीज

प्रमुख व्यावसायिक महत्व के बीज

- मीठी चुकंदर के बीज
- चुकंदर के बीज
- तिपतिया घास के बीज
- राई घास के बीज
- दांतेदार घास के बीज
- कलगी
- फूलगोभी के बीज
- प्याज के बीज
- मटर के बीज
- मूली के बीज
- अनार के बीज
- टमाटर के बीज
- इमली के बीज
- सब्जियों के बीज
- फलों के बीज
- चारा पौधों के बीज
- जड़ी-बूटी पौधों के बीज
- केंटकी ब्लूग्रास के बीज
- अन्य बीज

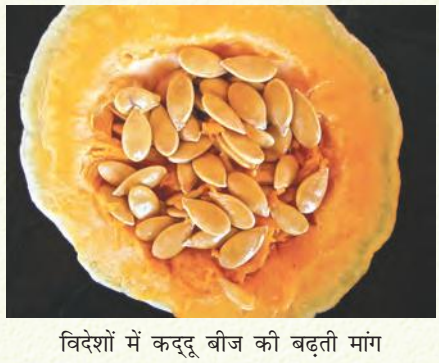

विदेशों में कद्दू बीज की बढ़ती मांग

गुणवत्ता के बीजोत्पादन के लिए किसानों को इस बारे में समुचित प्रबंधन के महत्व पर अतिरिक्त ध्यान देने की जरूरत पड़ती है।

एपीडा की रिपोर्ट के अनुसार अगर बीज को अच्छी परिस्थितियों में संग्रहित किया जाए तो ज्यादातर बीज सामान्य रूप से 2 या 3 साल के लिए काम आते हैं। ऐसे में देश में

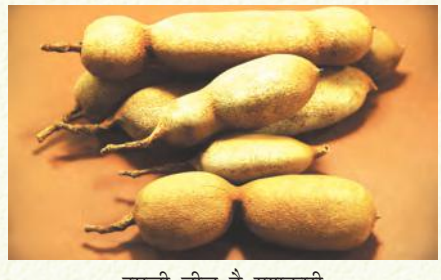

इमली बीज है गुणकारी

सब्जी बीज उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी भी किसानों के साथ मिलकर काम कर रहा है।

देश में सब्जियों और फलों के परंपरागत बीजों को संरक्षित करने को लेकर भी काम चल रहा है। इसके अलावा बीजों के अनुसंधान पर आधारित कई योजनाएं चलाई जा रही हैं। देश के अलग-अलग राज्यों में बीज विकास निगम जैसी संस्थाएं भी फलों और सब्जियों के बीजों के उत्पादन एवं भंडारण का काम कर रही हैं।

भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा किसानों के बीच बीज विनिमय नेटवर्क विकसित किया जा रहा है। इससे उत्तम बीजों का उत्पादन होगा एवं प्रजातियों का बेमेल मिश्रण कम होगा। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार की तरफ से भी देश में फल एवं सब्जियों के जैविक बीज उत्पादन एवं जागरूकता के लिए किसानों के बीच विभिन्न कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

भा.कृ.अनु.प. के जर्नल्स एवं हैंडबुक्स

कृषि संबंधी स्वदेशी तकनीकी ज्ञान की सूची (सीडी)

भा.कृ.अनु.प. के प्रकाशन

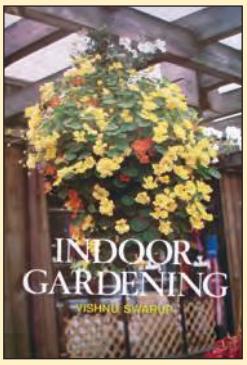

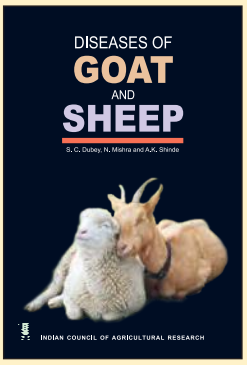

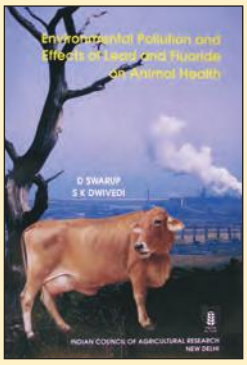

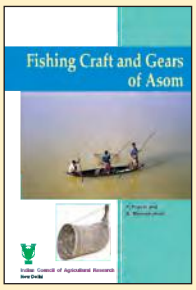

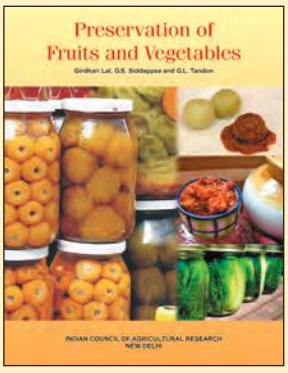

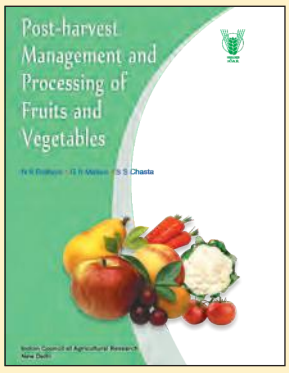

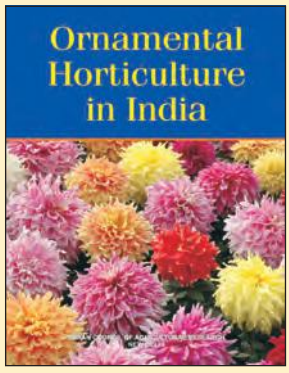

संपर्क

व्यवसाय प्रबंधक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन-I, पूसा, नई दिल्ली 110 012

टेलीफैक्स : 91-11-25843657; ई-मेल : bmicar@icar.org.in

वेबसाइट : www.icar.org.in

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह